# रेगिस्तान का रमेश

वास्तविक घटनाओं से प्रेरित एक प्रेरक कहानी,
जो ज़िंदगी बदल दे

टी. अंसारी

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

**BLUEROSE PUBLISHERS**
India | U.K.

Copyright © T. Ansari 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

For permissions requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7825-556-4

Cover design: Anuj
Typesetting: Simran

First Edition: August 2026

# समर्पण

यह पुस्तक समर्पित है

हर उस इंसान के नाम

जो हालात से नहीं,

अपनी सोच बदलकर जीतना चाहता है।

**टी. अंसारी**

# अभार

मैं इस पुस्तक के माध्यम से अपने सभी पाठकों के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

साथ ही उन सभी लोगों को भी मेरा सलाम, जो अपने देश को छोड़कर, अपने परिवार से दूर, किसी अन्य देश में रोटी–रोज़ी के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

आपकी मेहनत, आपकी जद्दोजहद और आपके सपने हमें प्रेरित करते हैं।

# प्रोलॉग

रेत पर लिखी हुई शुरुआत

रेगिस्तान में जब हवा चलती है, तो वह सिर्फ रेत नहीं उड़ाती…

वह कहानियाँ भी उड़ाती है।

कुछ कहानियाँ ऐसी होती हैं जो शहरों की चकाचौंध में खो जाती हैं।

और कुछ ऐसी… जो तपती रेत पर जन्म लेती हैं।

यह कहानी एक ऐसे लड़के की है,

जिसकी पहचान उसके काम से नहीं, उसकी सोच से बनी।

जिसे दुनिया ने "भेड़ चराने वाला" कहा…

लेकिन जिसने खुद को कभी छोटा नहीं माना।

उसका नाम था — रमेश।

सऊदी अरब का वह रेगिस्तान,

जहाँ दिन में सूरज आग बरसाता है और रात को

सन्नाटा दिल को चीर देता है…

वहीं कहीं एक छोटा सा तंबू था।

तंबू के बाहर बंधी थीं सैकड़ों भेड़ें।

और अंदर बैठा था एक नौजवान —

हाथ में मोबाइल, आँखों में अनगिनत सवाल।

उसके हाथ खुरदरे थे।

चेहरा धूप से जला हुआ।

पैरों में छाले।

लेकिन दिल… अभी भी ज़िंदा था।

रात के उस सन्नाटे में जब दूर कहीं हवा की आवाज़ आती थी,

तो ऐसा लगता था जैसे कोई अदृश्य ताकत उससे पूछ रही हो —

"क्या यही है तुम्हारी ज़िंदगी?"

रमेश अक्सर आसमान की तरफ देखता था।

वही आसमान जो उसके गाँव में भी था।

वही चाँद, वही तारे।

बस फर्क इतना था कि गाँव में -

उन तारों के नीचे माँ की आवाज़ होती थी…

और यहाँ सिर्फ खामोशी।

वह सोचता —

क्या सपने सिर्फ अमीरों के लिए होते हैं?

क्या संघर्ष सिर्फ गरीबों की किस्मत है?

क्या हालात ही इंसान की पहचान तय करते हैं?

रेगिस्तान में हर कदम भारी होता है।

रेत पर चलना आसान नहीं होता।

पैर जितना आगे बढ़ाओ, आधा पीछे धँस जाता है।

और शायद जिंदगी भी कुछ ऐसी ही होती है।

रमेश की कहानी सिर्फ विदेश जाकर काम करने की कहानी नहीं है।

यह कहानी है उस मानसिक लड़ाई की…

जो इंसान अपने भीतर लड़ता है।

वह लड़ाई, जिसमें सामने कोई दुश्मन नहीं होता।

बस खुद की कमजोरियाँ होती हैं।

डर होता है।

अकेलापन होता है।

और कभी-कभी हार मान लेने का मन भी।

लेकिन हर इंसान के अंदर एक छोटी सी चिंगारी होती है।

अक्सर वह चिंगारी हालात की आँधी में दब जाती है।

पर अगर कोई उसे बचा ले…

तो वही चिंगारी एक दिन रोशनी बन जाती है।

रमेश के अंदर भी एक चिंगारी थी।

दिन भर 48 डिग्री की गर्मी में भेड़ें चराना,

मालिक की डाँट सुनना,

रात को सूखी रोटी खाना,

और फिर मोबाइल की छोटी सी स्क्रीन

पर दुनिया को देखना —

यही उसकी दिनचर्या थी।

दुनिया आगे बढ़ रही थी।

लोग बड़े-बड़े मंचों पर खड़े होकर भाषण दे रहे थे।

लोग लाखों की भीड़ से तालियाँ बटोर रहे थे।

और यहाँ…

रेगिस्तान के बीच एक लड़का –

अपने अस्तित्व से जूझ रहा था।

लेकिन कहानी यहीं खत्म नहीं होती।

क्योंकि कभी-कभी, सबसे बड़ी क्रांति बाहर नहीं…

अंदर होती है।

एक दिन, उसी रेगिस्तान में खड़े होकर,

रमेश ने अपने आप से एक सवाल पूछा —

"अगर मैं हालात नहीं बदल सकता…

तो क्या मैं अपनी सोच बदल सकता हूँ?"

यही सवाल इस कहानी की असली शुरुआत है।

यह किताब किसी हीरो की नहीं है।

यह किसी अमीर या मशहूर इंसान की जीवनी नहीं है।

यह एक साधारण लड़के की कहानी है,

जिसने यह तय किया कि

वह अपने हालात से बड़ा बनेगा।

वह आज भी वही है।

वही धूप।

वही रेत।

वही काम।

लेकिन कुछ बदल गया है।

उसकी नज़र।

उसकी सोच।

उसका विश्वास।

रेगिस्तान ने उसे तोड़ा नहीं…

तराशा है।

यह कहानी आपको बताएगी कि

कभी-कभी भगवान इंसान को ऊँचा मंच नहीं देता…

बल्कि गहरा संघर्ष देता है।

क्योंकि संघर्ष से निकली हुई ताकत

ज़्यादा टिकाऊ होती है।

जब आप इस किताब के अगले पन्ने पलटेंगे,

तो आप सिर्फ रमेश की यात्रा नहीं पढ़ेंगे…

आप अपने अंदर के उस हिस्से से मिलेंगे

जो शायद अभी भी हालात से डरता है।

और शायद...

कहीं न कहीं

आपको अपने जीवन का रेगिस्तान भी दिखे।

लेकिन याद रखिए —

रेत पर भी कदमों के निशान बनते हैं।

बस चलना बंद नहीं होना चाहिए।

रमेश चला था...

धीरे-धीरे...

अकेले...

लेकिन रुका नहीं।

और शायद इसी वजह से

उसकी कहानी आज आपके हाथों में है

# इस पुस्तक के बारे में

“रेगिस्तान का रमेश” केवल एक कहानी नहीं है, यह उस सच्चाई का आईना है जिसे दुनिया के लाखों लोग जीते हैं, पर बहुत कम लोग समझते हैं। यह पुस्तक उन अनगिनत युवाओं की भावनाओं, संघर्षों और सपनों की आवाज़ है, जो अपने घर-परिवार से दूर रहकर रोटी, जिम्मेदारी और भविष्य के बीच संतुलन बनाने की कोशिश करते हैं।

यह कहानी एक साधारण लड़के रमेश की है —

लेकिन उसका संघर्ष असाधारण है।

उसका काम छोटा दिख सकता है,

पर उसकी सोच बड़ी है।

रेगिस्तान की तपती रेत, 48 डिग्री की गर्मी, अकेलापन, मालिक की डाँट, और रात का सन्नाटा — यह सब सिर्फ बाहरी हालात हैं। असली कहानी उस मानसिक लड़ाई की है, जो इंसान अपने भीतर लड़ता है। वह लड़ाई जिसमें सामने कोई दिखाई देने वाला दुश्मन नहीं होता, लेकिन भीतर डर, असुरक्षा और हीनभावना जैसे कई सवाल खड़े रहते हैं।

यह पुस्तक यह बताती है कि

हालात हमेशा हमारे हाथ में नहीं होते,

लेकिन नजरिया हमेशा हमारे हाथ में होता है।

रमेश की यात्रा संघर्ष से शुरू होती है, लेकिन धीरे-धीरे वह समझता है कि असली बदलाव जगह बदलने से नहीं, सोच बदलने से आता है। वह आज भी वही काम करता है, वही धूप सहता है, वही रेत पर चलता है — पर अब उसका नजरिया बदल चुका है। और यही बदलाव उसकी असली जीत है।

यह किताब उन लोगों को समर्पित है —

जो विदेशों में मेहनत कर रहे हैं,

जो अपनों से दूर रहकर सपनों को थामे हुए हैं,

जो हर दिन गिरते हैं पर फिर उठ खड़े होते हैं।

“रेगिस्तान का रमेश” आपको यह एहसास दिलाएगी कि

आपकी कहानी भी महत्वपूर्ण है।

आपका संघर्ष भी बेकार नहीं है।

और आपका वर्तमान आपकी अंतिम पहचान नहीं है।

अगर इस पुस्तक को पढ़ते समय आपको अपने जीवन का कोई हिस्सा इसमें दिखे,

अगर किसी पंक्ति में आपको अपनी पीड़ा, अपना सपना या अपना सवाल मिले —

तो समझिए, यह कहानी अपना उद्देश्य पूरा कर चुकी है।

यह सिर्फ रमेश की कहानी नहीं है।

यह हर उस इंसान की कहानी है,

जो परिस्थितियों से बड़ा बनना चाहता है।

याद रखिए —

"याद रखो सोच बदलो… ज़िंदगी बदलेगी।"

**— टी. अंसारी**

# पात्र परिचय

## 1. रमेश

इस कहानी का मुख्य पात्र।

एक साधारण परिवार से आया हुआ युवक, जो रोज़ी-रोटी की तलाश में सऊदी अरब के रेगिस्तान तक पहुँचता है। भेड़ें चराना उसका काम है, लेकिन उसकी पहचान केवल उसके काम से तय नहीं होती। अंदर ही अंदर वह सवालों, संघर्षों और सपनों से भरा हुआ है।

रमेश उस हर युवा का प्रतीक है, जो हालात से लड़ते हुए अपनी सोच को बचाए रखना चाहता है।

## 2. रमेश की माँ

ममता, प्रतीक्षा और विश्वास का प्रतीक।

वह दूर गाँव में रहकर हर दिन अपने बेटे के लौटने की राह देखती है। उसकी दुआएँ रमेश की ताकत हैं। माँ इस कहानी में भावनात्मक जड़ की तरह है — जो दिखती कम है, पर जुड़ी हर जगह से है।

3. **रमेश के पिता**

जिम्मेदारी और सादगी की मिसाल।

उन्होंने जिंदगी को संघर्ष के रूप में जिया है और चाहते हैं कि उनका बेटा उनसे बेहतर जीवन पाए। उनके कम शब्दों में भी गहरी चिंता और उम्मीद छिपी रहती है।

4. **मालिक (कपिल / अरबी मालिक)**

कठोर व्यवहार और अनुशासन का चेहरा।

वह रमेश की रोजमर्रा की वास्तविकता का हिस्सा है। उसकी डाँट, उसकी अपेक्षाएँ और उसका रवैया रमेश के मानसिक संघर्ष को और गहरा बनाते हैं। यह पात्र परिस्थितियों की कठोरता को दर्शाता है।

5. **रेगिस्तान**

हाँ, इस कहानी में रेगिस्तान भी एक पात्र है।

तपती धूप, अंतहीन रेत, और रात का सन्नाटा — ये सब मिलकर रमेश को तोड़ते भी हैं और तराशते भी।

रेगिस्तान केवल स्थान नहीं, एक परीक्षा है।

और वही परीक्षा रमेश को नया नजरिया देती है।

## 6. गाँव

वह जगह जहाँ से यात्रा शुरू हुई।

जहाँ यादें हैं, बचपन है, अपनों की आवाज़ है। गाँव इस कहानी में उम्मीद और जड़ों का प्रतीक है।

यह पात्र केवल कहानी के हिस्से नहीं हैं,

ये जीवन के अलग-अलग रूप हैं।

इनमें से हर पात्र कहीं न कहीं हम सबके भीतर भी मौजूद है।

**— टी. अंसारी**

# विषय सूची

अध्याय 1: एक सपना, एक गाँव ................................ 1
अध्याय 2: मजबूरी का टिकट.................................. 11
अध्याय 3: अड़तालीस (48) डिग्री की हक़ीक़त .........20
अध्याय 4: अकेलापन और आँसू.............................28
अध्याय 5: जब लोग हँसे.........................................35
अध्याय 6: सोच का पहला विद्रोह............................43
अध्याय 7: पहला वीडियो .......................................51
अध्याय 8: ट्रोल, ताने और तड़प ..............................63
अध्याय 9: वायरल… और ज़िम्मेदारी......................73
अध्याय 10: पहचान की शुरुआत — नाम, पैसा और परीक्षा..........................................................................82
अध्याय 11: नाम के दुश्मन .....................................92
अध्याय 12: वापसी की पुकार...............................104
अध्याय 13: जुबान की कीमत...............................110
अध्याय 14: गुजरता साल ....................................119
(लेखक की ओर से)............................................133
लेखक परिचय (T. Ansari) ...............................135

# अध्याय – 1

# एक सपना, एक गाँव

उत्तर प्रदेश

जिला कुशीनगर

गाँव — जंगलनहार छपरा

चमकी टोला

यहीं से शुरू होती है

रेगिस्तान के रमेश की कहानी।

मिट्टी की सोंधी खुशबू,

कच्ची गलियाँ,

सपनों से भरी आँखें

और हालात से जूझता एक साधारण लड़का…

जिसे दुनिया बाद में जानने वाली थी,

लेकिन जिसने खुद को सबसे पहले

यहीं पहचाना था।

गाँव की सुबहें शहरों की तरह शोर से नहीं खुलतीं।

वहाँ सूरज पहले आँगन में उतरता है,

फिर धीरे-धीरे लोगों की आँखों में।

उसी गाँव के किनारे, कच्ची पगडंडी से –

थोड़ी दूर, टेढ़ी-मेढ़ी खड़ी एक झोपड़ी थी — जैसे हवा से लड़ते-लड़ते थक गई हो।

वह झोपड़ी ही रमेश का घर थी।

घर कहना भी कभी-कभी बड़ा शब्द लगता था।

छप्पर बांस और फूस का, दीवारें मिट्टी की -

बरसात में जिन पर दरारें उभर आतीं।

छत ऐसी कि तेज बारिश हो तो भीतर बर्तन रखकर पानी रोका जाता।

गर्मी में वही छप्पर आग की तरह तपता और सर्दी में हवा सीधी अंदर घुस आती।

रमेश तब बहुत छोटा था। उम्र इतनी कि दुनिया की बड़ी बातें समझ में न आएँ, पर अभाव की चुभन महसूस हो जाए।

उसके पिता सुबह सूरज उगने से पहले ही घर से –

निकल जाते।

कंधे पर पुराना गमछा, हाथ में दरांती या फावड़ा।

वे अपने खेत के मालिक नहीं थे।

दूसरों के खेतों में मजदूरी करते थे। दिन भर पसीना बहाकर शाम को जितना मिलता, वही घर की साँसें चलाता।

मजदूरी तय नहीं थी।

कभी काम मिला तो कुछ रुपये, कभी खाली हाथ लौटना पड़ा। पर लौटते समय उनके चेहरे पर थकान से ज्यादा चिंता होती —

“आज घर में क्या बनेगा?”

रमेश की माँ उस घर की असली दीवार थी।

शरीर से साधारण, पर मन से पहाड़ जैसी मजबूत।

सुबह चूल्हा जलातीं, लकड़ियाँ जोड़तीं, राख झाड़तीं।

धुएँ से उनकी आँखें लाल हो जातीं, पर चेहरे पर शिकायत नहीं आती।

रमेश से बड़ी उसकी पाँच बहनें थीं।

पाँचों बहनें अलग-अलग स्वभाव की -

पर सबकी आँखों में एक जैसी संकोच भरी समझदारी।

वे जानती थीं कि घर की हालत कैसी है। कोई खिलौनों की जिद नहीं करता, कोई नए कपड़ों की माँग नहीं करता।

रमेश उन सबमें सबसे छोटा था।

बहनों के बीच पला, इसलिए उसे दुलार भी मिला और जिम्मेदारी का एहसास भी जल्दी हुआ।

घर में जब कभी थोड़ा अनाज आता, तो माँ सबसे पहले बच्चों को खिलातीं। खुद आख़िर में खातीं, वह भी कम।

कई बार तो सिर्फ पानी पीकर सो जातीं।

गाँव में त्योहार आते तो दूसरे घरों में रंग दिखता।

कहीं मिठाई बनती, कहीं ढोल बजता। रमेश दूर खड़ा देखता रहता। उसके घर में त्योहार का मतलब बस इतना था कि उस दिन पिता जी थोड़ी देर से लौटते और माँ बच्चों को समझातीं — "खुश रहो, यही सबसे बड़ी दौलत है।"

रमेश को स्कूल जाना अच्छा लगता था।

गाँव का छोटा-सा प्राथमिक विद्यालय।

मिट्टी का मैदान, टेढ़ी बेंचें, और काली पट्टी जिस पर सफेद चाक से अक्षर लिखे जाते।

वह कक्षा चार तक पहुँचा।

किताबों में उसे एक नई दुनिया दिखती थी — जहाँ लोग बड़े शहरों में जाते हैं, कुछ बनते हैं, सम्मान पाते हैं।

पर एक दिन घर में बात हुई — चुपचाप, धीमे स्वर में।

स्कूल में वार्षिक शुल्क और कुछ और खर्च मिलाकर लगभग डेढ़ सौ रुपये देने थे।

डेढ़ सौ रुपये।

किसी अमीर के लिए छोटी रकम।

पर उस घर के लिए पहाड़।

पिता जी कई दिनों तक सोचते रहे।

माँ ने भी अपने पुराने बक्से में देखा, जहाँ कभी-कभार दो-चार नोट रखे जाते थे। पर वहाँ भी खालीपन था।

रमेश समझ नहीं पा रहा था कि यह राशि इतनी बड़ी क्यों है।

उसे बस इतना पता चला कि अगले महीने से वह स्कूल नहीं जा पाएगा।

उस दिन जब उसने अपनी किताबें समेटीं, तो उसकी आँखों में आँसू नहीं थे — पर भीतर कुछ टूट गया था।

गाँव में किसी से मदद माँगने की हिम्मत भी नहीं हुई।

जिनके साथ खेतों में काम करते थे, वे खुद तंगहाल थे।

और जो थोड़े सम्पन्न थे, उनके दरवाज़े पर जाकर हाथ फैलाना पिता जी की प्रकृति में नहीं था।

धीरे-धीरे रमेश की दिनचर्या बदल गई।

सुबह स्कूल की घंटी की जगह वह पिता के साथ –

खेत की ओर जाने लगा।

कभी घास काटना, कभी पशु चराना, कभी मेड़ ठीक करना।

उम्र खेलने की थी, पर हाथों में काम आ गया।

बहनों की जिम्मेदारी भी घर पर थी।

बड़ी बहनें छोटी-मोटी सिलाई या दूसरों के घरों में मदद कर आतीं

घर में जब कभी कोई मेहमान आने का न्योता देता, तो माँ के चेहरे पर हल्की-सी चिंता उभर आती।

किसी शादी-ब्याह में बुलावा आता तो जाना जरूरी होता, पर वहाँ ले जाने को ढंग का कपड़ा नहीं।

कभी-कभी तो माँ किसी को बहाना कर मना कर देतीं। धीरे-धीरे रिश्तेदारों का आना-जाना कम हो गया।

गरीबी सिर्फ पेट की नहीं होती।

वह रिश्तों की दूरी भी बनाती है।

रमेश ने बहुत छोटी उम्र में यह देख लिया था।

बरसात के दिनों में झोपड़ी की हालत और खराब हो जाती।

एक कोने से पानी टपकता, दूसरे से मिट्टी झरती।

रात में सब एक जगह सिमटकर बैठते।

माँ बर्तन रखतीं, बहनें कपड़े फैलाकर पानी रोकने की कोशिश करतीं।

ऐसी ही एक रात रमेश चुपचाप लेटा था।

बाहर बारिश थी, भीतर सन्नाटा।

उसने पहली बार मन ही मन सोचा —

"क्या जीवन हमेशा ऐसा ही रहेगा?"

उसके पास उत्तर नहीं था।

पर सवाल जाग चुका था।

उसी झोपड़ी में, उसी गाँव की धूल में, एक सपना धीरे-धीरे आकार ले रहा था।

रमेश ने देखा था कि गाँव के कुछ लोग बाहर काम करने जाते हैं — दूर शहरों में, कभी-कभी विदेश तक।

जब वे लौटते, तो उनके कपड़े अलग होते, चाल अलग होती, और घरों में पक्की दीवारें खड़ी हो जातीं।

वह उन्हें दूर से देखता।

कुछ पूछता नहीं, पर मन में एक चित्र बनाता।

"एक दिन मेरा घर भी ऐसा होगा।"

यह सपना किसी से कहा नहीं गया।

न माँ से, न पिता से, न बहनों से।

पर उस छोटे-से बालक के भीतर एक आग जल उठी थी।

गरीबी ने उसे तोड़ा जरूर, पर भीतर एक जिद भी बो दी —

कि एक दिन वह इस झोपड़ी की छत को बदल देगा।

अभी वह छोटा था।

संसाधन नहीं थे।

पढ़ाई छूट चुकी थी।

पर आँखों में जो सपना था, वह किसी भी कागज़ से बड़ा था।

गाँव की उसी पगडंडी पर चलते हुए, खेतों की मेड़ों पर काम करते हुए, और बरसात में टपकती छत के नीचे बैठते हुए —

रमेश का बचपन बीत रहा था।

किसी को नहीं पता था कि यही बच्चा एक दिन अपने हालात से बड़ा फैसला करेगा।

अभी वह सिर्फ एक गरीब परिवार का सबसे छोटा बेटा था।

पर उसके भीतर एक अनकहा वादा जन्म ले चुका था —

कि एक दिन यह झोपड़ी कहानी बनेगी,

और वह खुद उसका उत्तर।

## अध्याय - 2

# मजबूरी का टिकट

समय धीरे-धीरे बीतता रहा।

खेतों की मेड़ों पर दौड़ता वह बालक कब सोलह वर्ष का हो गया, किसी को ठीक से पता ही नहीं चला।

शरीर लंबा होने लगा था, चेहरे पर हल्की-सी कठोरता आने लगी थी।

बचपन की मासूमियत अब जिम्मेदारियों के बोझ के नीचे दब चुकी थी।

झोपड़ी अब भी वैसी ही थी।

बरसात में टपकती, गर्मी में तपती, सर्दी में काँपती।

पिता की मजदूरी में कोई स्थिरता नहीं आई थी।

बहनों की उम्र बढ़ रही थी, और उनके विवाह की चिंता घर की दीवारों से टकराकर हर रात लौट आती थी।

रमेश समझ चुका था —

सिर्फ मेहनत से पेट भर सकता है, पर हालात नहीं बदलते।

गाँव में कभी-कभी खबर आती कि फलाँ लड़का विदेश चला गया है।

कोई कहता वह सऊदी अरब में है, कोई कहता दुबई में।

जब वे दो-तीन साल बाद लौटते, तो उनके घरों पर नई छतें चमकतीं।

दरवाज़े लकड़ी के हो जाते, दीवारें पक्की।

रमेश उन्हें चुपचाप देखता।

उसके भीतर वर्षों पहले बोया गया सपना अब आकार लेने लगा था।

एक शाम उसने साहस करके पिता से कहा,

“बाबूजी, मैं बाहर जाना चाहता हूँ… विदेश।”

पिता पहले तो चुप रहे। उन्होंने रमेश को देखा — जैसे तौल रहे हों कि यह लड़का सच में बड़ा हो गया है या अभी भी वही बच्चा है।

“विदेश जाना आसान नहीं होता –

उन्होंने धीमे स्वर में कहा।

रमेश ने उत्तर दिया, “यहाँ रहकर भी क्या आसान है?”

उस रात घर में देर तक बात हुई।

माँ की आँखें कई बार भर आईं।

बहनें चुप बैठी रहीं। किसी के पास स्पष्ट समाधान नहीं था, पर यह सब समझ रहे थे कि अगर कुछ बदलना है तो जोखिम लेना होगा।

गाँव में एक एजेंट के बारे में चर्चा थी, जो लड़कों को सऊदी अरब भेजता था। लोग कहते थे — पैसे ज्यादा लेता है, पर काम पक्का करवा देता है।

रमेश और उसके पिता उससे मिलने गए।

एजेंट के घर में प्लास्टिक की कुर्सियाँ थीं, दीवार पर विदेश की तस्वीरें टंगी थीं। एजेंट आत्मविश्वास से भरा बैठा था।

उसने पूछा, "उम्र कितनी है?"

रमेश ने सच कहा, "सोलह।"

एजेंट हल्का-सा मुस्कुराया।

"कागज़ों में अठारह करनी पड़ेगी, तभी पासपोर्ट बनेगा।"

यह सुनकर पिता थोड़े असहज हुए।

पर एजेंट ने समझाया, “सब ऐसे ही जाता है। काम की जरूरत है तो थोड़ा कागज़ आगे-पीछे करना पड़ता है।”

रकम सुनकर दोनों चुप हो गए। यह उनके लिए बहुत बड़ी थी।

घर लौटकर फिर चर्चा हुई।

कुछ जमीन गिरवी रखी गई। कुछ उधार लिया गया। माँ ने अपनी पुरानी चाँदी की पायल तक बेच दी।

रमेश सब देख रहा था।

उसे महसूस हो रहा था — यह सिर्फ उसका सपना नहीं, पूरे परिवार की उम्मीद है।

पासपोर्ट बनवाने के लिए शहर जाना पड़ा। फोटो खिंचवाई गई।

पहली बार उसने खुद को कागज़ पर छपा देखा। उसे अजीब लगा — जैसे वह सचमुच कहीं दूर जाने वाला हो।

दिन बीतते गए। इंतजार लंबा था। हर बार एजेंट कहता, “थोड़ा और समय लगेगा।”

आखिर वह दिन आ गया जब टिकट हाथ में था।

एक छोटा-सा कागज़ —

पर उसमें पूरे घर की मजबूरी लिखी थी।

गाँव छोड़ने का दिन तय हुआ।

सुबह जब रमेश घर से निकला, तो झोपड़ी को उसने पहली बार अलग नजर से देखा। दीवारों की दरारें, टूटी चौखट, चूल्हे का धुआँ — सब जैसे उसे रोकना चाह रहे हों।

माँ ने उसके सिर पर हाथ रखा। कुछ कहना चाहा, पर शब्द गले में अटक गए। बस इतना बोलीं, "खुद का ध्यान रखना।"

पिता ने गमछा उसकी जेब में रख दिया।

"जहाँ रहो, ईमान मत छोड़ना।"

बहनों की आँखें लाल थीं।

सबसे छोटी बहन ने उसका हाथ कसकर पकड़ लिया, जैसे छोड़ना नहीं चाहती हो।

रमेश ने खुद को मजबूत दिखाने की कोशिश की।

पर भीतर से वह काँप रहा था।

गाँव की पगडंडी पर चलते हुए उसे हर पेड़, हर खेत अलग लग रहा था।

जैसे सब विदा दे रहे हों।

पहली बार वह इतना दूर जा रहा था — सिर्फ शहर नहीं, देश से बाहर।

लखनऊ हवाई अड्डे पर पहुँचकर वह स्तब्ध रह गया।

इतनी बड़ी इमारत, चमकती फर्श, चारों ओर अलग-अलग भाषाएँ बोलते लोग। मशीनों की आवाज़, घोषणाएँ, सुरक्षा जाँच —

सब कुछ उसके लिए नया था।

वह भीड़ में खुद को छोटा महसूस कर रहा था।

हाथ में टिकट और पासपोर्ट कसकर पकड़े हुए, वह हर कदम सोच-समझकर रख रहा था।

जब विमान में बैठा, तो खिड़की से बाहर झाँकते हुए उसने सोचा —

"क्या मैं सच में उड़ने जा रहा हूँ?"

विमान ने जैसे ही उड़ान भरी, उसका दिल तेज़ धड़कने लगा।

नीचे धरती छोटी होती गई। खेत, नदियाँ, गाँव — सब बिंदु बनते गए।

उसकी आँखों में अपने घर की छवि उभरी।

उसने मन ही मन प्रण लिया —

"मैं लौटूँगा… बदलकर।"

कई घंटे की यात्रा के बाद जब विमान सऊदी अरब की धरती पर उतरा, तो बाहर का दृश्य बिल्कुल अलग था।

रेगिस्तान की तपिश, चौड़ी सड़कें, ऊँची इमारतें। हवा में अलग गंध थी। भाषा अलग, चेहरे अलग, पहनावा अलग।

रमेश ने पहली बार महसूस किया कि वह सचमुच अपने संसार से बाहर आ चुका है।

एयरपोर्ट से बाहर निकलते ही गर्म हवा ने उसका स्वागत किया।

जैसे आग का झोंका हो।

एजेंट का आदमी उसे लेने आया था।

कुछ और लड़के भी थे। सबके चेहरे पर मिश्रित भाव — डर, उत्साह, अनिश्चितता।

रास्ते में कार की खिड़की से वह बाहर देखता रहा।

रेत के विस्तार, दूर-दूर तक फैले मैदान, ऊँचे टावर।

उसे लगा — यह दुनिया उसकी दुनिया से कितनी अलग है।

रात को जब वह अपने कमरे में पहुँचा, तो थकान से ज्यादा विचार थे।

छोटा-सा कमरा, कुछ बिस्तर, अलग-अलग राज्यों के लोग।

वह चुपचाप अपने बिस्तर पर बैठ गया।

सोलह साल का वह लड़का, जिसके कागज़ों में उम्र बढ़ा दी गई थी, अब हजारों किलोमीटर दूर था।

उसे याद आया —

झोपड़ी की टपकती छत।

माँ की आँखें।

पिता का गमछा।

उसने जेब से वही गमछा निकाला और तकिए के नीचे रख दिया।

यह सिर्फ कपड़ा नहीं था —

घर की खुशबू थी।

उस रात उसे नींद देर से आई।

डर भी था, पर भीतर एक अजीब-सी दृढ़ता भी।

वह जानता था —

यह टिकट शौक का नहीं था।

यह मजबूरी का टिकट था।

पर कभी-कभी मजबूरी ही आदमी को वहाँ पहुँचा देती है, जहाँ वह सपने में भी खुद को नहीं देखता।

रमेश की असली परीक्षा अब शुरू होने वाली थी।

# अध्याय - 3

# अड़तालीस (48) डिग्री की हक़ीक़त

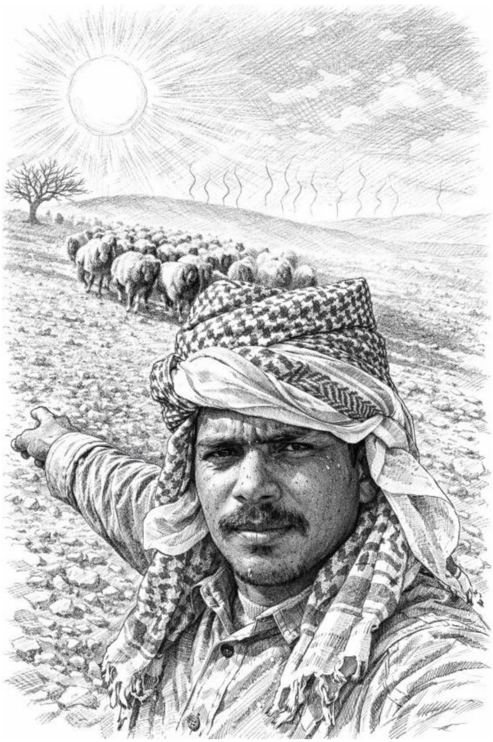

सऊदी अरब की धरती पर कदम रखते समय रमेश ने जितनी बातें सुनी थीं, उनमें चमक ज्यादा थी, सच्चाई कम। किसी ने कहा था –

“काम आसान है, पैसा अच्छा है।” किसी ने बताया था – “दो साल में घर बदल जाएगा।”

पर असली सच्चाई उसे कुछ ही दिनों में समझ आने लगी।

जिस दिन पहली बार उसे काम पर ले जाया गया, उस दिन दोपहर का तापमान अड़तालीस डिग्री था।

अड़तालीस।

रेगिस्तान की हवा गर्म नहीं, झुलसाने वाली थी।

जैसे साँस अंदर लो तो फेफड़े तक तप जाएँ। सूरज सिर के ठीक ऊपर, और धरती से उठती गर्मी पैरों के तलवों को जलाती हुई।

रमेश को बताया गया — उसका काम भेड़ चराना है।

उसने सोचा था शायद किसी फैक्ट्री में काम मिलेगा, या किसी इमारत में। पर सामने फैला था अंतहीन रेगिस्तान और सैकड़ों भेड़ों का झुंड।

उनके साथ जो लड़के उसी गाँव-इलाके से आए थे, वे भी वहीं खड़े थे।

सबके चेहरों पर निराशा उतर आई थी।

“हमसे नहीं होगा यह काम,” किसी ने धीमे से कहा।

“इतनी गर्मी में कैसे रहेंगे?” दूसरे ने जोड़ा।

पहले ही हफ्ते में उनमें से कई लोग वापस जाने की जुगत लगाने लगे।

कुछ ने एजेंट को फोन किया, कुछ ने बीमारी का बहाना बनाया।

रमेश भी भीतर से हिल चुका था।

रेत के बीच घंटों भेड़ों के पीछे चलना, पानी सीमित, छाया लगभग नहीं। दूर-दूर तक सिर्फ आसमान और धरती।

रात को जब वह कमरे में लौटता, तो शरीर थकान से टूट चुका होता।

कमरे में उसका साथी एक सूडान देश का व्यक्ति था। सब उसे “सूडानी” कहकर बुलाते थे। कद लंबा, रंग सांवला, आँखों में कठोरता।

रमेश को अरबी भाषा का एक भी शब्द ढंग से नहीं आता था।

उसे सिर्फ इतना पता था कि “पानी” को क्या कहते हैं और “रोटी” को क्या।

सूडानी अरबी में तेज़-तेज़ बोलता।

रमेश आधा समझता, आधा अंदाज़ लगाता।

भाषा की कमी ने उसे और कमजोर बना दिया।

धीरे-धीरे हालात ऐसे बने कि सूडानी ने उसे अपने हिसाब से इस्तेमाल करना शुरू कर दिया।

“खाना बनाओ।”

“कपड़े धो दो।”

“यह साफ कर दो।”

और कभी-कभी तो थकान से चूर होने के बावजूद उससे अपने पैर दबवाता।

रमेश के भीतर अपमान की आग जलती, पर शब्द नहीं थे।

विरोध करने की भाषा ही नहीं थी।

वह जानता था — अगर यहाँ से भागा, तो घर का कर्ज़ कौन चुकाएगा? बहनों की शादी कैसे होगी? झोपड़ी की छत कब बदलेगी?

उसने खुद से कहा —

“सहन कर ले… अभी यही रास्ता है।”

एक-एक दिन भारी था।

रेगिस्तान में भेड़ चराते समय वह दूर क्षितिज को देखता। कभी लगता जैसे वहाँ पानी है, पर पास जाने पर पता चलता — वह तो मृगतृष्णा है।

उसे महसूस हुआ — जीवन भी कुछ ऐसा ही है।

जो दिखता है, वह हमेशा सच नहीं होता।

धीरे-धीरे साथ गए लगभग सभी लोग लौट गए।

किसी ने टिकट कटवा लिया, किसी ने बीमारी का बहाना बनाकर छुट्टी ले ली।

रमेश अकेला रह गया।

अब वह समझ चुका था — यह सिर्फ काम नहीं, परीक्षा है।

सूडानी के साथ उसका रिश्ता अजीब था।

एक तरफ वह उसका कमरा साथी था, दूसरी तरफ मालिक जैसा व्यवहार करता।

रमेश कई बार रात में चुपचाप छत को देखता और सोचता —

"क्या मैं हमेशा ऐसे ही रहूँगा? क्या मैं किसी की जी-हजूरी करने के लिए पैदा हुआ हूँ?"

उसके भीतर एक चुप प्रतिज्ञा जन्म लेने लगी।

वह हर दिन सूडानी की बातें ध्यान से सुनता।

शब्दों को पकड़ता। अर्थ समझने की कोशिश करता।

रेगिस्तान में जब भेड़ें चरतीं, तो वह खुद से अरबी शब्द दोहराता।

पानी — माअ।

रोटी — खुब्ज़।

आओ — तआल।

धीरे-धीरे उसे वाक्य समझ में आने लगे।

एक दिन सूडानी ने कुछ कहा और रमेश ने सही जवाब दे दिया।

सूडानी ने उसे आश्चर्य से देखा।

उस दिन पहली बार रमेश को लगा — वह सिर्फ मजदूर नहीं, सीखने वाला इंसान है।

भाषा उसके लिए हथियार बनती जा रही थी।

अब जब सूडानी उसे आदेश देता, तो वह समझता भी था और जवाब भी दे पाता था।

समय के साथ रमेश ने अरबी बोलना शुरू कर दिया। टूटी-फूटी, पर स्पष्ट।

अब वह बाज़ार में खुद सामान ले आता। भेड़ों की गिनती मालिक से सीधे अरबी में बताता।

सूडानी का रवैया भी थोड़ा बदलने लगा।

जो पहले उसे सिर्फ आदेश देता था, अब कभी-कभी सलाह भी देता।

पर सबसे बड़ा बदलाव रमेश के भीतर था।

उसे महसूस हुआ —

कमजोरी परिस्थिति से नहीं, अज्ञान से आती है।

जिस दिन उसने भाषा सीख ली, उसी दिन उसका डर आधा खत्म हो गया।

रेगिस्तान की अड़तालीस डिग्री की गर्मी अब भी थी।

भेड़ें अब भी थीं।

काम अब भी कठिन था।

पर रमेश बदल चुका था।

अब वह सिर्फ सहने वाला लड़का नहीं था।

वह सीखने वाला, समझने वाला, आगे बढ़ने वाला युवक बन रहा था।

एक शाम जब सूरज ढल रहा था –

और आकाश लाल हो गया था, वह भेड़ों के बीच खड़ा था। हवा गर्म थी, पर भीतर ठंडक थी।

उसे याद आया —

झोपड़ी की टपकती छत।

माँ की थकी आँखें।

उसने मन ही मन कहा —

"मैं यहाँ मजबूरी में रुका था…

पर अब मैं मजबूती बनकर लौटूँगा।"

अड़तालीस डिग्री की तपिश ने उसके शरीर को झुलसाया जरूर,

पर उसी ने उसके भीतर की कमजोरी भी जला दी।

रेगिस्तान ने उसे तोड़ा नहीं —

गढ़ा।

और यह तो बस शुरुआत थी।

# अध्याय - 4
# अकेलापन और आँसू

सूडानी के जाने के बाद रेगिस्तान और बड़ा हो गया था।

पहले कम से कम तंबू के भीतर एक और सांस चलती थी,

किसी और की आहट होती थी।

अब जब हवा तंबू की दीवारों से टकराती, तो सिर्फ कपड़े की सरसराहट सुनाई देती।

रमेश अब पूरी तरह अकेला था।

रेगिस्तान के बीच उसका छोटा-सा तंबू —

चार खूँटों पर टिका हुआ, ऊपर मोटा कपड़ा, नीचे रेत।

वही उसका घर था। न पक्की दीवार, न दरवाज़ा, न खिड़की।

बस एक परदा, जिसे वह रात में अंदर से गिरा देता।

दिन में अड़तालीस डिग्री की तपिश, रात में अचानक उतरती ठंड।

सुबह सूरज निकलते ही तंबू भट्टी की तरह गरम हो जाता।

वह जल्दी बाहर निकल जाता, क्योंकि अंदर बैठना मुश्किल हो जाता।

भेड़ों का झुंड अब पूरी तरह उसकी जिम्मेदारी था।

पानी की टंकी, चारे की बोरी, और दूर-दूर तक फैली रेत — यही उसकी दुनिया थी।

सूडानी के रहते हुए कम से कम अरबी बोलने की प्रैक्टिस होती थी।

अब बात करने के लिए भी कोई नहीं था।

कभी-कभी वह खुद से ही अरबी में बोलने लगता —

जैसे कोई सामने खड़ा हो।

"इधर आओ…"

"पानी पी लो…"

भेड़ों से बातें करना उसकी आदत बन गई।

अकेलापन जब हद से बढ़ता है, तो इंसान निर्जीव चीज़ों से भी रिश्ता बना लेता है।

रातें सबसे कठिन होती थीं।

तंबू के बाहर हवा की आवाज़ आती।

कभी दूर किसी जानवर की हल्की चीख।

आसमान में अनगिनत तारे।

इतना खुला आकाश कि लगता जैसे धरती बहुत छोटी है और इंसान उससे भी छोटा।

रमेश तंबू के भीतर रेत पर बिछे पतले बिस्तर पर लेटता और ऊपर कपड़े की छत को देखता रहता।

उसे याद आता —

गाँव की झोपड़ी, जहाँ सब एक साथ सिमटकर सोते थे।

माँ की खाँसी की आवाज़।

बहनों की धीमी हँसी।

यहाँ न कोई खाँसी थी, न हँसी।

एक रात तेज़ आँधी आई।

रेत के बवंडर उठे। तंबू जोर-जोर से –

हिलने लगा। उसे लगा जैसे खूँटे निकल जाएँगे और तंबू उड़ जाएगा।

वह बाहर निकला, रस्सियाँ कसकर पकड़ीं।

आँखों में रेत भर गई। साँस लेना मुश्किल हो गया।

उस क्षण उसे पहली बार डर लगा —

अगर यह तंबू उड़ गया, तो वह कहाँ जाएगा?

पर आँधी कुछ देर में शांत हो गई।

वह वापस अंदर आया, बैठ गया।

उसके हाथ काँप रहे थे।

उसकी आँखों से आँसू बह निकले।

यह आँसू सिर्फ डर के नहीं थे।

यह उस थकान के थे, जो महीनों से जमा हो रही थी।

वह सोचने लगा —

"क्या सच में मैं यह सब सहने के लिए बना हूँ?"

पर उसी पल उसके भीतर से दूसरी आवाज़ आई —

"हाँ, क्योंकि तुम्हारे पीछे पूरा घर खड़ा है।"

अकेलापन उसे तोड़ भी रहा था और बना भी रहा था।

अब उसे किसी की जी-हजूरी नहीं करनी थी।

न सूडानी के पैर दबाने थे,

न उसका खाना बनाना था।

पर स्वतंत्रता के साथ जिम्मेदारी भी पूरी थी।

हर गलती की कीमत वही चुकाता।

अगर कोई भेड़ खो जाती –

तो जवाब उसे देना होता।

धीरे-धीरे उसने अपने दिन को एक अनुशासन में ढाल लिया।

सुबह फज्र की अजान दूर कहीं से सुनाई देती,

वह उठ जाता। पानी पीता, भेड़ों को खोलता, उन्हें धीरे-धीरे चलाता।

दोपहर में किसी छायादार टीले के पास थोड़ी देर बैठता।

रोटी खाता, जो वह खुद बनाता था।

अब खाना वह अपने लिए बनाता था —

अपने स्वाद से, अपनी मर्जी से।

शाम को जब सूरज ढलता, तो आकाश लाल और सुनहरा हो जाता।

वह उस दृश्य को देर तक देखता रहता।

रेगिस्तान ने उसे एक चीज़ दी थी —

सोचने का समय।

वह अपने जीवन के हर मोड़ को याद करता।

स्कूल का छूटना।

डेढ़ सौ रुपये की असमर्थता।

माँ का चेहरा।

एक दिन उसने तंबू के बाहर बैठकर आसमान –

की ओर देखा और धीरे से कहा —

“मैं रो सकता हूँ, पर रुकूँगा नहीं।”

उस दिन के बाद उसके आँसू कम हो गए।

अकेलापन अब उसका दुश्मन नहीं रहा।

वह उसका साथी बन गया।

वह खुद से बात करता, खुद को समझाता, खुद को संभालता।

उसे एहसास हुआ —

इंसान जब बिल्कुल अकेला रह जाता है,

तभी वह खुद को असली रूप में जान पाता है।

रेगिस्तान के उस तंबू में रहने वाला रमेश अब वही लड़का नहीं था, जो डरकर रात भर जागता था।

अब वह रात के अँधेरे में भी निडर होकर बाहर निकल सकता था।

आँधी आए तो रस्सियाँ कस सकता था।

गलती हो तो सुधार सकता था।

अकेलेपन ने उसे आत्मनिर्भर बना दिया था।

और आँसुओं ने उसे भीतर से मजबूत।

रेगिस्तान के बीच वह अकेला था —

पर अब कमजोर नहीं था।

उसकी चुप्पी में ताकत थी।

उसकी आँखों में थकान थी, पर हार नहीं।

तंबू छोटा था,

पर उसके भीतर रहने वाला इंसान अब बड़ा हो रहा था।

# अध्याय - 5
# जब लोग हँसे

हर संघर्ष की कहानी में कुछ चेहरे ऐसे होते हैं, जो सामने नहीं दिखते, पर भीतर हमेशा साथ चलते हैं। रमेश के जीवन में ऐसा ही एक नाम था —

भगवंत कुशवाहा।

गाँव की गलियों में, धूल भरे मैदान में, पोखरे के किनारे —

दोनों साथ बड़े हुए थे। खून का रिश्ता नहीं था,

पर अपनापन खून से गहरा था।

जब रमेश का स्कूल छूटा था,

तब सबसे पहले जिसने उसके कंधे पर हाथ रखा था, वह भगवंत ही था।

"तू चिंता मत कर," उसने कहा था, "हम दोनों कुछ करेंगे।"

पर हालात दोनों के अपने-अपने थे।

रमेश विदेश चला गया, और भगवंत गाँव में रह गया।

सऊदी अरब के रेगिस्तान में अकेले तंबू में बैठे रमेश को अक्सर भगवंत की याद आती। वह सोचता —

“अगर वह यहाँ होता, तो शायद यह सफर थोड़ा आसान होता।”

पर असली परीक्षा तब शुरू हुई

जब गाँव में लोगों की बातें बढ़ने लगीं।

जब रमेश विदेश जाने की तैयारी कर रहा था, तब बहुत लोग हँसे थे।

किसी ने कहा — “अरे, यह क्या करेगा विदेश जाकर?”

किसी ने ताना मारा — “चार क्लास पढ़ा है, भेड़ ही तो चराएगा।”

किसी ने धीमे स्वर में कहा — “पैसा डूब जाएगा, वापस आ जाएगा।”

गाँव में सपने देखना आसान नहीं होता।

जो अलग सोचता है, वह पहले हँसी का पात्र बनता है।

रमेश ने उन बातों को सुना था।

उसके पिता ने भी सुना था।

माँ ने भी सुना था।

पर सबसे ज्यादा चुभन रमेश को हुई थी।

एक शाम वह खेत की मेड़ पर बैठा था,

जब दो आदमी उसके सामने हँसते हुए बोले—

"अरे रमेश, सऊदी जाकर क्या राजा बनेगा?"

उसने सिर झुका लिया। जवाब नहीं दिया।

उसी समय भगवंत वहाँ आया।

उसने उन लोगों की तरफ देखा और शांत स्वर में कहा —

"राजा बने न बने, मेहनत करेगा।

तुम लोग हँस लो आज, कल देख लेना।"

उस दिन रमेश ने पहली बार महसूस किया कि कोई है जो उसके सपने पर विश्वास करता है।

विदेश जाने के बाद जब संघर्ष शुरू हुआ,

तब भी गाँव की बातें उसके कानों तक पहुँचती रहीं।

कभी किसी ने फोन पर कहा —

"बहुत गर्मी होती है वहाँ, देखो कब तक टिकता है।"

कभी सुनने में आया —

"साथ गए सब लोग लौट आए, अब यह भी आ जाएगा।"

जब सच में साथ गए लोग वापस लौटने लगे, तब गाँव में फिर हँसी गूँजी होगी।

"देखा, कहा था न?"

पर रमेश नहीं लौटा।

रेगिस्तान की 48 डिग्री में खड़े होकर उसने हर ताने को याद किया।

हर हँसी उसे चुभती नहीं थी,

अब वह उसे ताकत देती थी।

तंबू में रात को लेटे-लेटे वह सोचता —

"अगर मैं लौट गया, तो वही लोग कहेंगे — हम सही थे।"

और फिर उसे भगवंत की आवाज़ याद आती —

"कल देख लेना।"

एक दिन फोन पर भगवंत से बात हुई।

नेटवर्क कमजोर था, पर आवाज़ पहचान में आ रही थी।

"कैसा है?" भगवंत ने पूछा।

रमेश कुछ पल चुप रहा। फिर बोला —

“कठिन है… पर रुकूँगा नहीं।”

फोन के उस पार से आवाज़ आई —

“बस यही मत भूलना कि तू कमजोर नहीं है।

लोग हँसेंगे, यह उनका काम है। तू कर, यह तेरा काम है।”

यह शब्द रमेश के भीतर उतर गए।

गाँव में लोग अक्सर उस पर चर्चा करते।

कोई कहता — “बहुत कमाता होगा।”

कोई कहता — “दुखी होगा।”

सच दोनों के बीच था।

वह कमाता भी था, दुख भी सहता था।

पर एक चीज़ स्पष्ट थी —

वह भागा नहीं।

जब भी रेगिस्तान में अकेले खड़ा होता, उसे महसूस होता कि यह सिर्फ नौकरी नहीं, एक जवाब है।

हर कदम जो वह रेत पर रखता,

वह उन हँसने वालों को दिया गया उत्तर था।

धीरे-धीरे गाँव में खबर पहुँची कि रमेश टिक गया है।

लोगों की हँसी कम होने लगी।

उनकी आवाज़ों में अब जिज्ञासा थी।

“सच में रह गया?”

“कैसे?”

और भगवंत मुस्कुराता।

वह जानता था —

सपनों पर हँसने वाले बहुत मिलते हैं,

पर साथ खड़े रहने वाले कम।

रमेश के जीवन में भगवंत वही कम लोगों में से एक था।

रेगिस्तान के तंबू में बैठा रमेश अब समझ चुका था —

जब लोग हँसते हैं,

तो दो रास्ते होते हैं —

या तो इंसान टूट जाए,

या उस हँसी को अपनी ऊर्जा बना ले।

रमेश ने दूसरा रास्ता चुना।

अब अगर कोई हँसता भी, तो उसे फर्क कम पड़ता।

क्योंकि वह जान चुका था —

आज जो हँस रहे हैं,

कल वही पूछेंगे —

“कैसे किया?”

रेगिस्तान की तपिश, तंबू का अकेलापन, और गाँव की हँसी —

इन सबने मिलकर उसे और मजबूत बना दिया।

अब वह सिर्फ एक मजदूर नहीं था।

वह एक उत्तर बन रहा था —

उन सब सवालों का, जो उसके पीछे उठाए गए थे।

और दूर गाँव में, कोई एक व्यक्ति ऐसा था, जो हर हँसी के बीच भी उसके लिए विश्वास की तरह खड़ा था —

भगवंत कुशवाहा।

कहानी अभी लंबी थी।

पर हँसी अब उसे डराती नहीं थी।

वह जान चुका था —

जब लोग हँसते हैं,

तो समझो रास्ता अलग है।

और अलग रास्ते ही मंज़िल बदलते हैं।

# अध्याय - 6
# सोच का पहला विद्रोह

विद्रोह हमेशा शोर से शुरू नहीं होता।

कभी-कभी वह एक खामोश सवाल से जन्म लेता है।

उस रात रेगिस्तान असामान्य रूप से शांत था।

हवा धीमी थी, तंबू की रस्सियाँ स्थिर थीं, और दूर भेड़ों की हल्की-सी आहट के अलावा कुछ सुनाई नहीं दे रहा था।

रमेश देर तक जागता रहा।

रेत पर बिछे पतले बिस्तर पर लेटे हुए वह कपड़े की छत को देखता रहा। आँखें खुली थीं, पर वह बाहर नहीं — भीतर देख रहा था।

गाँव की हँसी, लोगों के ताने, "भेड़ चराने गया है" —

ये सब आवाज़ें अब उतनी चुभती नहीं थीं।

बल्कि अब वे उसे चुनौती जैसी लग रही थीं।

उसने खुद से पूछा —

"अगर लोग मेरे काम पर हँस रहे हैं…

तो क्या मैं सच में छोटा हूँ?

या उनकी सोच छोटी है?”

यह सवाल साधारण नहीं था।

यही उसके भीतर का पहला विद्रोह था।

यह विद्रोह किसी आदमी के खिलाफ नहीं था।

न कपिल मालिक के खिलाफ।

न गाँव वालों के खिलाफ।

यह विद्रोह था —

अपनी उस सोच के खिलाफ, जो –

अब तक खुद को छोटा मानती आई थी।

अगली सुबह सूरज हमेशा की तरह निर्दयी था।

अड़तालीस डिग्री की गर्मी, रेत की चमक –

दूर तक फैला सुनापन। भेड़ों का झुंड बिखरता, फिर इकट्ठा होता। सब कुछ पहले जैसा था।

लेकिन रमेश पहले जैसा नहीं था।

आज वह भेड़ों को सिर्फ जानवरों की तरह नहीं देख रहा था।

वह उन्हें जिम्मेदारी की तरह देख रहा था।

उसे समझ आने लगा था —

जिम्मेदारी छोटी या बड़ी नहीं होती।

उसे निभाने वाला आदमी छोटा या बड़ा होता है।

दोपहर में जब सब शांत था,

वह एक ऊँचे टीले पर बैठ गया।

रेत दूर तक फैली थी — जैसे कोई अंत ही नहीं।

उसने खुद से कहा —

"यह जगह मुझे खत्म भी कर सकती है…

और मजबूत भी।"

फर्क सिर्फ सोच का है।

उसे अचानक पिता की बात याद आई —

"मुसीबत से भागो मत, उसे समझो।"

अब तक वह रेगिस्तान से लड़ रहा था।

अब उसने उसे समझने की कोशिश शुरू की।

गर्मी उसे धैर्य सिखा रही थी।

अकेलापन उसे खुद से मिलवा रहा था।

लोगों की हँसी उसे भीतर से जगा रही थी।

तो फिर शिकायत किस बात की?

उसने जेब से मोबाइल निकाला। स्क्रीन पर उसका चेहरा दिखा।

धूप से जला हुआ।

होठ सूखे हुए।

पर आँखों में चमक थी।

वह कुछ देर खुद को देखता रहा।

“क्या मैं सच में इतना छोटा हूँ?” उसने मन ही मन पूछा।

अचानक उसके भीतर एक विचार जन्मा।

“अगर लोग मेरे काम को छोटा समझते हैं…

तो क्यों न मैं उन्हें दिखाऊँ कि इस काम के पीछे कितनी मेहनत है?”

विचार छोटा था।

पर असर गहरा था।

यह विद्रोह हालात के खिलाफ नहीं था।

यह विद्रोह अपनी सीमित सोच के खिलाफ था।

शाम को कपिल मालिक ऊँट से उतरकर उसके पास आया।

उसने भेड़ों को देखा, पानी की टंकी देखी, चारों ओर नजर दौड़ाई।

फिर संक्षेप में कहा —

“आज काम ठीक किया।”

पहले रमेश सिर्फ सिर हिलाता था।

आज उसने हल्की मुस्कान के साथ जवाब दिया —

“सीख रहा हूँ।”

कपिल ने कुछ पल उसे देखा। शायद उसने भी महसूस किया —

यह लड़का बदल रहा है।

रात को तंबू के बाहर बैठकर रमेश ने आसमान की ओर देखा।

तारे पहले जैसे ही थे।

पर उसकी सोच बदल चुकी थी।

उसने मोबाइल हाथ में लिया।

कैमरा खोला।

फिर बंद कर दिया।

दिल तेज़ धड़क रहा था।

“क्या मैं सच में यह कर सकता हूँ?”

कुछ क्षण वह चुप बैठा रहा।

फिर उसने खुद से कहा —

“अगर मैं 48 डिग्री में खड़ा रह सकता हूँ…

तो कैमरे के सामने क्यों नहीं?”

यह सिर्फ वीडियो बनाने का विचार नहीं था।

यह अपने अस्तित्व को स्वीकार करने का निर्णय था।

अब वह अपने काम को छुपाएगा नहीं।

न शर्माएगा।

न झुकेगा।

भेड़ें चराना उसका काम था।

मेहनत उसकी पहचान थी।

संघर्ष उसका शिक्षक था।

तो फिर उसे छुपाने की जरूरत क्यों?

उस रात उसने खुद से एक वादा किया —

“मैं अपनी कहानी से भागूँगा नहीं।

मैं उसे छुपाऊँगा नहीं।

मैं उसे जीऊँगा… और दिखाऊँगा।”

रेगिस्तान की हवा आज अलग लग रही थी।

जैसे वह उसकी गवाही दे रही हो।

सोच का पहला विद्रोह हमेशा अंदर से शुरू होता है।

कोई तालियाँ नहीं बजतीं।

कोई शोर नहीं होता।

बस एक शांत फैसला होता है —

अब मैं खुद को छोटा नहीं मानूँगा।

रमेश ने वही फैसला कर लिया था।

उसे अभी नहीं पता था कि यह छोटा-सा विचार आगे चलकर क्या रूप लेगा।

पर इतना तय था —

अब वह हालात का शिकार नहीं रहेगा।

वह अपनी सोच का मालिक बनेगा।

और यहीं से किसी भी बदलाव की असली शुरुआत होती है।

# अध्याय - 7
# पहला वीडियो

रेगिस्तान में हर दिन लगभग एक जैसा लगता है।

सूरज उगता है।

गर्मी बढ़ती है।

भेड़ें बिखरती हैं।

शाम ढलती है।

और फिर एक और रात तंबू में बीत जाती है।

लेकिन कुछ दिन ऐसे होते हैं जो बाहर से साधारण दिखते हैं…

और भीतर से इतिहास बन जाते हैं।

वह दिन भी ऐसा ही था।

तीन महीने पूरे हो चुके थे।

रमेश ने अपनी पहली कमाई का बड़ा हिस्सा बचाया था।
खर्च बहुत कम था — न बाजार जाना, न शौक, न घूमना।

बस पानी, आटा, चावल और जरूरत की चीज़ें।

उसने कई रात बैठकर हिसाब लगाया था।

"इतना भेज दूँ?

या थोड़ा और रुकूँ?"

आख़िर एक दिन उसने हिम्मत की। पैसे ट्रांसफर किए।

जब मोबाइल स्क्रीन पर "सक्सेसफुल" लिखा आया, तो उसकी उंगलियाँ कुछ सेकंड तक वहीं रुकी रहीं।

यह सिर्फ पैसे भेजना नहीं था।

यह उसके संघर्ष का पहला प्रमाण था।

शाम को गाँव से फोन आया।

माँ की आवाज़ काँप रही थी —

"पैसा मिल गया…"

पिता ने धीमे स्वर में कहा —

"तू ठीक है न?"

रमेश ने हमेशा की तरह वही जवाब दिया —

"हाँ, सब अच्छा है।"

पर इस बार उसके भीतर कुछ अलग था।

उसे पहली बार लगा —

वह सच में घर का सहारा बन रहा है।

उस रात वह देर तक सो नहीं पाया।

तंबू के बाहर बैठकर उसने आसमान देखा।

तारों की चमक पहले जैसी ही थी, लेकिन आज उसे लगा जैसे उनमें से कोई एक तारा उसके गाँव के ऊपर भी चमक रहा होगा।

उसी रात एक विचार फिर से सिर उठाने लगा।

सोच का वह पहला विद्रोह, जो कुछ दिन पहले जन्मा था, अब आकार माँग रहा था।

सुबह जब वह काम पर निकला, तो मन में एक हलचल थी।

आज वह सिर्फ भेड़ें चराने नहीं जा रहा था।

आज वह खुद को साबित करने जा रहा था।

भेड़ों को चराते हुए वह बार-बार जेब टटोलता।

मोबाइल वहीं था।

जैसे वह कह रहा हो —

"आज डरना मत।"

दोपहर तक तापमान फिर अड़तालीस डिग्री के आसपास पहुँच गया।

रेत तप रही थी। हवा गर्म थी।

लेकिन आज उसके भीतर डर से ज्यादा जिद थी।

शाम के समय, जब सूरज ढलने लगा और आसमान सुनहरा हो गया, रमेश एक ऊँचे टीले पर चढ़ गया।

नीचे भेड़ों का झुंड फैला था।

दूर तक रेत।

ऊपर लालिमा से भरा आकाश।

उसने जेब से मोबाइल निकाला।

हाथ हल्के काँप रहे थे।

कैमरा खोला।

स्क्रीन पर उसका चेहरा उभरा —

धूप से जला हुआ, पसीने से भरा, आँखों के नीचे हल्की थकान।

वह कुछ सेकंड चुप रहा।

दिल इतनी तेज़ धड़क रहा था जैसे कोई सुन लेगा।

फिर उसने धीमे स्वर में कहा —

"नमस्ते…

मेरा नाम रमेश है।

मैं सऊदी अरब में भेड़ चराता हूँ।”

इतना कहते ही उसकी साँस थोड़ी तेज़ हो गई।

उसे लगा —

क्या यह ठीक है?

क्या लोग फिर हँसेंगे?

पर इस बार उसने खुद को रोका नहीं।

“लोग सोचते हैं कि यह छोटा काम है।

शायद है भी।

लेकिन इस काम में भी मेहनत है… जिम्मेदारी है…

और सपने हैं।”

उसने कैमरा घुमाया।

भेड़ों का झुंड।

रेगिस्तान का विस्तार।

डूबता सूरज।

“यह है मेरी दुनिया।

यहाँ गर्मी अड़तालीस डिग्री तक जाती है।

पानी सीमित है।

अकेलापन बहुत है।

लेकिन अगर हम मेहनत से भागेंगे नहीं…

तो हालात भी एक दिन बदलेंगे।”

उसकी आवाज़ में हल्का कंपन था।

पर उसमें झूठ नहीं था।

वीडियो पाँच मिनट का बना।

रिकॉर्डिंग बंद।

अब सबसे बड़ा सवाल सामने था —

“अपलोड करूँ… या नहीं?”

उसने स्क्रीन को देखा। अंगूठा “अपलोड” के ऊपर ठहरा हुआ।

उसे गाँव की हँसी याद आई।

“भेड़ चराने गया है…”

उसे भगवंत की आवाज़ याद आई —

“तू कर, लोग बोलेंगे।”

उसे माँ की थकी आवाज़ याद आई।

उसने गहरी साँस ली।

क्लिक।

वीडियो अपलोड हो गया।

रात बेचैनी में बीती।

नेटवर्क कमजोर था। वीडियो धीरे-धीरे अपलोड हुआ।

कुछ देर बाद पहला नोटिफिकेशन आया।

1 व्यू

फिर 5

फिर 12

फिर 27

रमेश हर कुछ मिनट में स्क्रीन देखता।

एक कमेंट आया —

“सच में भेड़ चराता है?”

दूसरा —

“कम से कम ईमानदार तो है।”

तीसरा —

“भाई, आपका वीडियो देखकर लगा कि हम अकेले नहीं हैं। मैं भी बाहर काम करता हूँ।”

यह कमेंट पढ़कर रमेश लंबे समय तक स्क्रीन देखता रहा।

पहली बार उसे लगा —

उसकी आवाज़ किसी तक पहुँची है।

अगली सुबह जब वह उठा, तो मोबाइल में कई नोटिफिकेशन थे।

व्यूज़ 2,000 पार कर चुके थे।

उसका दिल तेज़ धड़कने लगा।

वह हैरान था।

उसे उम्मीद नहीं थी कि कोई इतने लोग देखेंगे।

लेकिन असली बदलाव संख्या में नहीं था।

असली बदलाव उसके भीतर था।

अब उसे लगने लगा था —

उसकी कहानी की कीमत है।

वह सिर्फ रेगिस्तान का मजदूर नहीं है।

वह अनुभव का गवाह है।

दोपहर में कपिल मालिक आया।

“आज खुश दिख रहा है?”

रमेश ने हल्की मुस्कान के साथ कहा —

“बस… थोड़ा अच्छा लग रहा है।”

कपिल ने भेड़ों को देखा, फिर रमेश को।

उसे शायद समझ नहीं आया कि बदलाव क्या है,

पर उसने महसूस जरूर किया —

यह लड़का अंदर से मजबूत हो रहा है।

शाम तक व्यूज़ और बढ़ गए।

कुछ लोगों ने तारीफ की।

कुछ ने फिर मजाक उड़ाया।

लेकिन इस बार फर्क था।

अब हँसी अकेली नहीं थी।

तारीफ भी साथ खड़ी थी।

और सबसे बड़ी बात —

अब उसे खुद पर शर्म नहीं थी।

उस रात वह तंबू के बाहर बैठा था।

हवा हल्की थी।

उसने आसमान की तरफ देखा और मुस्कुराया।

"मैंने डर पर जीत पा ली," उसने मन ही मन कहा।

पहला वीडियो परफेक्ट नहीं था।

आवाज़ साफ नहीं थी।

एंगल ठीक नहीं था।

लेकिन वह सच्चा था।

और सच्चाई हमेशा अपना रास्ता बना लेती है।

उस दिन से उसकी जिंदगी में कुछ बदल गया।

काम वही था।

गर्मी वही थी।

अकेलापन वही था।

लेकिन अब उसके पास एक आवाज़ थी।

अब वह सिर्फ रेत पर चलने वाला मजदूर नहीं था।

वह अपनी कहानी का कथाकार भी था।

रेगिस्तान अब भी विशाल था —

पर उसे अब छोटा लगने लगा था।

क्योंकि जब इंसान अपनी आवाज़ खोज लेता है,

तो सबसे बड़ा रेगिस्तान भी उसके भीतर समा जाता है।

और उस दिन

रेगिस्तान का रमेश

सिर्फ भेड़ चराने वाला नहीं रहा।

वह बोलने लगा था

# अध्याय - 8

# ट्रोल, ताने और तड़प

सफलता धीरे-धीरे चलती है…

लेकिन आलोचना दौड़ती है।

रेगिस्तान में जैसे गर्म हवा अचानक तेज़ हो जाती है,

वैसे ही रमेश की बढ़ती पहचान के साथ शब्दों की आँधी भी तेज़ होने लगी।

पहला वीडियो लोगों को सच्चा लगा था।

दूसरा वीडियो थोड़ा बेहतर था —

आवाज़ साफ़, शब्द ठहरे हुए।

तीसरे में आत्मविश्वास झलकने लगा।

चौथे में उसने रेगिस्तान की सुबह दिखाई — 48 डिग्री की तपती दोपहर से पहले की ठंडी हवा।

व्यूज़ बढ़ रहे थे।

फॉलोअर्स बढ़ रहे थे।

लेकिन साथ ही बढ़ रही थी — टिप्पणियों की तल्ख़ी।

“ड्रामा कर रहा है।”

“गरीबी बेच रहा है।”

“अटेंशन चाहिए इसे।”

“भेड़ चराने वाला हमें क्या सिखाएगा?”

कुछ शब्द सिर्फ अक्षर नहीं होते।

वे भीतर उतर जाते हैं।

एक रात वह तंबू के अंदर बैठा मोबाइल स्क्रॉल कर रहा था।

बाहर हवा चल रही थी।

रेत तंबू की दीवारों से टकरा रही थी।

अचानक उसकी नज़र एक कमेंट पर रुकी —

“भेड़ चराने वाला हमें मोटिवेशन देगा?”

वह कुछ सेकंड तक स्क्रीन को देखता रहा।

दिल में हल्की चुभन हुई।

उसके मन में सवाल उठा —

“क्या सच में… मैं कौन होता हूँ कुछ कहने वाला?”

उसने मोबाइल नीचे रख दिया।

रेगिस्तान की रात उस दिन और भारी थी।

आसमान बड़ा था, लेकिन उसका मन छोटा हो गया था।

वह तंबू से बाहर निकला।

दूर तक अँधेरा।

ऊपर अनगिनत तारे।

उसे लगा —

जब आसमान इतना बड़ा है,

तो लोग इतनी छोटी सोच क्यों रखते हैं?

लेकिन सच यह था कि शब्दों ने असर किया था।

अगले दिन उसका ध्यान काम में नहीं लग रहा था।

भेड़ें बार-बार बिखर रही थीं।

वह उन्हें संभाल रहा था, पर मन कहीं और था।

गर्मी 48 डिग्री के करीब थी।

पसीना आँखों में जा रहा था।

दूर से कपिल मालिक की आवाज़ आई —

“ध्यान कहाँ है तुम्हारा?”

रमेश चौंक गया।

“जी… बस थोड़ा थक गया हूँ।”

कपिल उसके पास आया। कुछ देर तक उसे देखता रहा।

फिर बोला —

“थकान शरीर की हो तो आराम कर लो।

लेकिन अगर दिमाग की हो… तो सोच बदलनी पड़ती है।”

यह साधारण वाक्य था।

लेकिन रमेश के लिए एक संकेत।

शाम को उसने फिर मोबाइल उठाया।

इस बार उसने सिर्फ बुरे कमेंट्स नहीं पढ़े।

वह अच्छे कमेंट्स ढूँढ़ने लगा।

“भाई, आपसे हिम्मत मिलती है।”

“मेरे पापा भी बाहर काम करते हैं, आपका वीडियो उन्हें दिखाया।”

“आपकी सच्चाई अच्छी लगी।”

उसे एहसास हुआ —

एक ट्रोल सौ अच्छे शब्दों को ढँक देता है।

लेकिन अगर नजर बदली जाए,

तो तस्वीर बदल जाती है।

उस रात उसने एक नया वीडियो रिकॉर्ड किया।

चेहरा शांत था।

आवाज़ स्थिर।

"आज कुछ लोग कह रहे थे –

कि भेड़ चराने वाला मोटिवेशन नहीं दे सकता।

शायद सही कह रहे हैं।

मैं कोई बड़ा आदमी नहीं हूँ।

लेकिन मैं इतना जानता हूँ —

मेहनत छोटी नहीं होती।"

उसने कैमरा रेगिस्तान की तरफ घुमाया।

"यह रेत मुझे हर दिन गिराती है।

लेकिन मैं हर दिन उठता हूँ।

अगर यह मोटिवेशन नहीं है…

तो फिर क्या है?”

उसने वीडियो खत्म किया।

इस बार अपलोड करते समय उसके हाथ नहीं काँपे।

कुछ घंटों बाद कमेंट्स की बाढ़ आ गई।

“सही जवाब दिया भाई!”

“काम छोटा नहीं होता।”

“आपकी सच्चाई ही आपकी ताकत है।”

“जो हँस रहे हैं, वही एक दिन सीखेंगे।”

रमेश देर तक स्क्रीन देखता रहा।

उसे समझ में आने लगा —

ताने खत्म नहीं होंगे।

ट्रोल रुकेंगे नहीं।

लेकिन अगर दिल साफ़ हो,

तो शब्द हथियार नहीं बनते…

सीढ़ी बन जाते हैं।

धीरे-धीरे उसने अपने लिए नियम बनाए:

* हर दिन सीमित समय ही कमेंट पढ़ेगा।

* नफरत पर प्रतिक्रिया नहीं देगा।

* बहस में नहीं पड़ेगा।

* सिर्फ काम और सच्चाई पर ध्यान देगा।

रेगिस्तान अब सिर्फ कमाई की जगह नहीं था।

वह उसकी ट्रेनिंग ग्राउंड बन चुका था।

हर गर्म दिन उसे मजबूत बना रहा था।

हर ताना उसकी त्वचा को और मोटा कर रहा था।

हर तड़प उसे भीतर से तराश रही थी।

लेकिन संघर्ष केवल ऑनलाइन नहीं था।

गाँव में भी बातें होने लगीं।

कुछ लोग कह रहे थे —

“मोबाइल में बोलने लगा है अब।”

“काम करे या वीडियो बनाए?”

एक दिन भगवंत का फोन आया।

“वीडियो देख रहा हूँ,” उसने कहा।

“अच्छा कर रहा है तू।”

रमेश कुछ पल चुप रहा।

“लोग मजाक उड़ा रहे हैं,” उसने धीरे से कहा।

भगवंत हँसा —

“जब तू स्कूल छोड़ रहा था तब भी हँसे थे।

जब विदेश जा रहा था तब भी हँसे थे।

अब फिर हँस रहे हैं।

तू हँसी से डर जाएगा तो तेरी कहानी कौन लिखेगा?”

यह सुनकर रमेश के चेहरे पर हल्की मुस्कान आई।

उसे समझ आया —

हर दौर में हँसी बदलेगी,

पर उसका लक्ष्य नहीं।

एक शाम वह ऊँचे टीले पर खड़ा था।

हवा तेज़ थी।

भेड़ें नीचे फैली थीं।

सूरज ढल रहा था।

उसने खुद से कहा —

“अगर लोग मुझे नीचे गिराने की कोशिश कर रहे हैं…

तो इसका मतलब है कि मैं ऊपर बढ़ रहा हूँ।”

अब वह सिर्फ वीडियो नहीं बना रहा था।

वह अपना व्यक्तित्व गढ़ रहा था।

उसे समझ में आ गया था —

तारीफ और ताने दोनों जरूरी हैं।

तारीफ आत्मविश्वास देती है।

ताने धैर्य सिखाते हैं।

रेगिस्तान की रेत जैसे उसे रोज़ तपाती थी,

वैसे ही शब्द उसे तपाने लगे थे।

और तपकर ही सोना चमकता है।

अब वह पहले जैसा संवेदनशील जरूर था,

लेकिन कमजोर नहीं।

अब अगर कोई लिख देता —

“ड्रामा है,”

तो वह मुस्कुरा देता।

क्योंकि वह जान चुका था —

सच्चाई को अभिनय की जरूरत नहीं होती।

लेकिन जिंदगी सीधी रेखा नहीं होती।

जहाँ तारीफ और ताकत मिलती है,

वहीं एक नई परीक्षा इंतज़ार करती है।

ट्रोल और तानों की आँधी तो वह झेल चुका था।

अब आगे जो आने वाला था…

वह उसके धैर्य से भी बड़ा था।

रेगिस्तान अभी और परखेगा।

और रेगिस्तान का रमेश —

अब पीछे मुड़ने वाला नहीं था।

# अध्याय - 9
# वायरल... और ज़िम्मेदारी

कभी-कभी जिंदगी सालों तक शांत रहती है...

और फिर एक दिन अचानक तेज़ दौड़ने लगती है।

रमेश का एक वीडियो उस सुबह कुछ अलग कर गया।

वह वीडियो साधारण था।

न कोई बैकग्राउंड म्यूज़िक।

न कोई अभिनय।

न कोई बड़े शब्द।

बस वह...

रेगिस्तान...

और उसके भीतर से निकली सच्ची आवाज़।

उसने कैमरे की तरफ देखते हुए कहा था —

“अगर आप घर से दूर हो,

अगर लोग आपको छोटा समझते हैं,

तो याद रखो —

काम नहीं, सोच इंसान को बड़ा बनाती है।”

कुछ सेकंड वह चुप रहा।

फिर हल्की मुस्कान के साथ बोला —

“मैं भेड़ चराता हूँ… लेकिन सपने बड़े देखता हूँ।”

बस यही वाक्य आग की तरह फैल गया।

सुबह जब वह भेड़ों को लेकर निकला, तब तक सब सामान्य था।

दोपहर तक मोबाइल बार-बार वाइब्रेट होने लगा।

नेटवर्क कमजोर था, लेकिन नोटिफिकेशन रुक नहीं रहे थे।

व्यूज़ हज़ारों में…

फिर लाखों में।

कमेंट्स की बाढ़।

मैसेज।

अजनबी नंबरों से कॉल।

रमेश कुछ देर तक स्क्रीन को देखता रहा।

उसे समझ नहीं आ रहा था —

यह सच है या सपना?

वह वही आदमी था।

वही काम।

वही 48 डिग्री की तपती रेत।

लेकिन दुनिया की नजर बदल चुकी थी।

शाम को कपिल मालिक उसके पास आया।

“आज बहुत लोग तुम्हें फोन कर रहे हैं,” उसने शांत स्वर में कहा।

रमेश ने सिर झुकाकर जवाब दिया —

“जी… शायद वीडियो वायरल हो गया है।”

कपिल कुछ पल चुप रहा।

फिर बोला —

“नाम कमाना आसान है।

नाम संभालना मुश्किल।”

यह वाक्य सीधा दिल में उतर गया।

रेगिस्तान की हवा उस शाम थोड़ी अलग लग रही थी।

अब खुशी के साथ एक नया डर भी था।

रात को वह तंबू के बाहर बैठा था।

आसमान पहले जैसा ही था।

तारे उतने ही शांत।

लेकिन उसके भीतर सवाल उठ रहे थे —

"अब क्या?"

"क्या मैं इस पहचान को संभाल पाऊँगा?"

"अगर अगला वीडियो लोगों को पसंद नहीं आया तो?"

वायरल होना खुशी देता है।

लेकिन साथ ही दबाव भी लाता है।

अब वह सिर्फ अपने लिए नहीं बोल रहा था।

हजारों लोग उसे सुन रहे थे।

कुछ उम्मीद लेकर।

कुछ प्रेरणा लेकर।

कुछ तुलना लेकर।

अगले दिन उसने वीडियो बनाने से पहले लंबी साँस ली।

इस बार उसके शब्द हल्के नहीं थे।

उनमें जिम्मेदारी थी।

“दोस्तों,

अगर मेरे वीडियो से आपको थोड़ी भी हिम्मत मिलती है,

तो यह मेरे लिए सबसे बड़ी बात है।

लेकिन याद रखिए —

मैं कोई हीरो नहीं हूँ।

मैं भी आपकी तरह संघर्ष कर रहा हूँ।”

उसने कैमरा नीचे झुकाया।

रेगिस्तान की रेत दिखाई दी।

“अगर मैं गिर सकता हूँ…

तो आप भी गिर सकते हैं।

लेकिन फर्क यह होगा कि हम उठेंगे।”

वीडियो अपलोड हुआ।

फिर से व्यूज़ बढ़े।

फॉलोअर्स और जुड़े।

लेकिन इस बार रमेश भीतर से अलग था।

अब वह हर शब्द सोचकर बोलता।

हर वाक्य तौलकर कहता।

उसे समझ आ गया था —

एक गलत शब्द भरोसा तोड़ सकता है।

उसने अपने लिए कुछ नियम बना लिए:

* झूठा दिखावा नहीं करेगा।

* संघर्ष को बढ़ा-चढ़ाकर नहीं बताएगा।

* दूसरों को नीचा दिखाकर खुद को ऊँचा नहीं करेगा।

* सिर्फ वही बोलेगा जो सच है।

रेगिस्तान ने उसे सिखाया था —

यहाँ छल नहीं चलता।

यहाँ सहनशीलता चलती है।

48 डिग्री की गर्मी में नकलीपन टिक नहीं सकता।

कुछ दिन बाद गाँव से फोन आया।

माँ की आवाज़ में गर्व था।

“लोग कह रहे हैं तू टीवी में आएगा?”

उन्होंने हँसते हुए पूछा।

रमेश की आँखें नम हो गईं।

“अभी तो बस काम कर रहा हूँ, अम्मा,” उसने धीरे से कहा।

पीछे से पिता की आवाज़ आई —

“नाम कमाया है तो सिर झुका कर रखना।”

यह वही संस्कार थे

जो उसे जमीन से जोड़े हुए थे।

वायरल होने के बाद सबसे बड़ा बदलाव यह था —

अब वह खुद को छोटा नहीं समझता था।

लेकिन उसने खुद को बड़ा भी नहीं माना।

उसे समझ में आ गया था —

ऊँचाई स्थायी नहीं होती।

लेकिन चरित्र स्थायी हो सकता है।

एक शाम वह उसी टीले पर खड़ा था

जहाँ उसने पहला वीडियो बनाया था।

हवा तेज़ थी।

सूरज ढल रहा था।

भेड़ें नीचे शांत खड़ी थीं।

उसने मन ही मन कहा —

"यह शुरुआत है…

मंज़िल नहीं।"

वायरल होना उपलब्धि थी।

लेकिन असली जीत यह थी —

वह अब डर से आज़ाद था।

अब उसे हँसी से डर नहीं लगता था।

ट्रोल से डर नहीं लगता था।

संख्या से डर नहीं लगता था।

लेकिन जिंदगी सीधी राह नहीं देती।

जब इंसान ऊपर उठता है,

तो उसे दो चीजें घेरती हैं —

प्रशंसा…

और प्रलोभन।

प्रशंसा सिर घुमाती है।

प्रलोभन रास्ता बदलता है।

रेगिस्तान का रमेश अब एक नए मोड़ पर था।

वायरल होने की चमक के बाद

उसकी असली परीक्षा शुरू होने वाली थी।

# अध्याय - 10

# पहचान की शुरुआत — नाम, पैसा और परीक्षा

वायरल होने के बाद रमेश की दुनिया सचमुच बदलने लगी थी।

पहले उसका मोबाइल दिन भर शांत रहता था।

कभी-कभी घर से कॉल।

कभी भगवंत का मैसेज।

बस इतना ही।

अब हर घंटे नई नोटिफिकेशन आती थी।

मैसेज —

“भाई, हमारे ब्रांड का प्रमोशन कर दो।”

“इतने पैसे मिलेंगे।”

“बस यह बोल देना कि आप इस्तेमाल करते हो।”

“एक वीडियो… और पेमेंट तुरंत।”

रमेश कई बार स्क्रीन को देखता और यकीन नहीं कर पाता।

जो इंसान कल तक 48 डिग्री की तपती दोपहर में भेड़ें चरा रहा था,

आज उसे एक वीडियो के बदले उतने पैसे मिल सकते थे

जितना वह एक महीने में कमाता था।

रेगिस्तान वही था।

तंबू वही था।

भेड़ें वही थीं।

लेकिन हालात बदलने लगे थे।

एक शाम वह तंबू के अंदर बैठा मोबाइल देख रहा था।

एक बड़ी कंपनी का ऑफर सामने था।

"अगर आप हमारे प्रोडक्ट का प्रमोशन करेंगे,

तो आपको एक महीने की सैलरी से भी ज्यादा रकम मिलेगी।"

उसका दिल तेज़ धड़कने लगा।

उसने तुरंत हिसाब लगाया —

इतने पैसों से घर का कर्ज कम हो सकता है।

माँ के लिए नए कपड़े भेज सकता है।

पिता को खेत की चिंता से थोड़ी राहत मिल सकती है।

बहनों के बच्चों के लिए कुछ कर सकता है।

लेकिन एक सवाल बीच में खड़ा था।

उसने वह प्रोडक्ट कभी इस्तेमाल नहीं किया था।

उसे यह भी नहीं पता था कि वह सही है या नहीं।

क्या वह सिर्फ पैसे के लिए कैमरे के सामने झूठ बोल देगा?

रात को वह तंबू से बाहर निकल आया।

रेगिस्तान में हल्की ठंडक थी।

दिन की 48 डिग्री की आग अब धीरे-धीरे शांत हो रही थी।

वह रेत पर बैठ गया।

"अगर मैं पैसे के लिए कुछ भी बोल दूँ…

तो क्या मैं वही इंसान रहूँगा

जिस पर लोग भरोसा करते हैं?"

उसे अपना ही चेहरा याद आया —

पहले वीडियो वाला।

सादा।

सच्चा।

उसने खुद से वादा किया था —

झूठा दिखावा नहीं करेगा।

नाम के साथ जिम्मेदारी आई थी।

और अब पैसा परीक्षा लेकर आया था।

अगले दिन कपिल मालिक पास आया।

“कुछ परेशान लग रहे हो?”

रमेश कुछ पल चुप रहा।

फिर बोला —

“अगर ज्यादा पैसे कमाने का मौका मिले…

लेकिन दिल मना करे… तो क्या करना चाहिए?”

कपिल ने भेड़ों की तरफ देखा।

धीरे से बोला —

“रेगिस्तान में दूर से पानी दिखे तो हर बार वह असली नहीं होता।

कभी-कभी वह मृगमरीचिका होता है।”

रमेश समझ गया।

हर चमकती चीज सोना नहीं होती।

उस रात उसने उस कंपनी को जवाब लिखा —

“मैं वह चीज प्रमोट नहीं कर सकता

जिसे मैंने खुद नहीं अपनाया।”

कुछ सेकंड वह “सेंड” बटन को देखता रहा।

फिर दबा दिया।

दिल हल्का हो गया।

पैसा शायद चला गया।

लेकिन आत्मसम्मान बच गया।

कुछ दिनों बाद एक और मैसेज आया।

इस बार एक छोटा सा भारतीय ब्रांड था।

उन्होंने लिखा —

“हमें आपका सच्चा सफर पसंद है।

अगर आप चाहें तो हमारे साथ ईमानदारी से काम कर सकते हैं।

जो महसूस करें, वही कहें।”

यह प्रस्ताव अलग था।

रमेश ने जल्दबाजी नहीं की।

पहले उस प्रोडक्ट के बारे में पढ़ा।

समझा।

सोचा।

फिर निर्णय लिया।

इस बार उसके भीतर कोई विरोध नहीं था।

उसे एहसास हुआ —

पैसा बुरा नहीं होता।

गलत रास्ता बुरा होता है।

धीरे-धीरे उसकी कमाई बढ़ने लगी।

लेकिन उसकी जिंदगी नहीं बदली।

वह अभी भी वही साधारण कपड़े पहनता।

वही रेत में चलता।

वही भेड़ों के साथ दिन बिताता।

क्योंकि उसे डर था —

कहीं नाम उसे बदल न दे।

एक दिन गाँव से एक पुराने दोस्त का फोन आया।

"अरे, तू तो बड़ा आदमी बन गया!"

दोस्त ने हँसते हुए कहा।

रमेश मुस्कुराया।

"बड़ा काम नहीं...

बड़ी सोच बनानी है अभी।"

फोन रखने के बाद वह कुछ देर चुप बैठा रहा।

उसने खुद से कहा —

"अगर मैं जमीन छोड़ दूँगा,

तो ऊँचाई भी साथ छोड़ देगी।"

नाम मिल गया था।

पैसा आने लगा था।

लेकिन उसके भीतर एक और सवाल जन्म ले रहा था —

"क्या मैं इस पहचान को इंसानियत के साथ जोड़ पाऊँगा?"

वह नहीं चाहता था कि लोग सिर्फ उसे देखें।

वह चाहता था कि लोग खुद को देखें —

अपने संघर्ष को।

रेगिस्तान अब भी उसकी परीक्षा ले रहा था।

गर्मी अब भी 48 डिग्री तक जाती थी।

भेड़ें अब भी बिखरती थीं।

तंबू अब भी साधारण था।

कुछ भी बदला नहीं था —

सिवाय उसके भीतर के संतुलन के।

एक शाम वह उसी टीले पर खड़ा था।

हवा तेज़ थी।

सूरज ढल रहा था।

आसमान लाल था।

उसने मन ही मन कहा —

"मैं बदलूँगा…

लेकिन बिगड़ूँगा नहीं।"

यह उसका नया संकल्प था।

अब वह सिर्फ संघर्ष की कहानी नहीं था।

वह जिम्मेदारी की कहानी बन रहा था।

नाम ने उसे पहचान दी।

पैसे ने उसे विकल्प दिए।

लेकिन चरित्र ही तय करेगा —

वह कितनी दूर जाएगा।

और कहानी अभी खत्म नहीं हुई थी।

क्योंकि असली बदलाव तब आता है

जब इंसान सिर्फ खुद के लिए नहीं…

दूसरों के लिए जीना शुरू करता है।

## अध्याय - 11

# नाम के दुश्मन

सफलता का सबसे अजीब सच यह है —

जैसे-जैसे नाम बढ़ता है,

वैसे-वैसे अनजाने दुश्मन भी जन्म लेने लगते हैं।

रमेश ने कभी सोचा भी नहीं था कि उसका संघर्ष

किसी के लिए जलन का कारण बन जाएगा।

वह अब भी वही काम कर रहा था —

रेगिस्तान में, खुले आसमान के नीचे,

दिन की 48 डिग्री की तपती धूप में।

फर्क बस इतना था कि

अब लोग उसे पहचानने लगे थे।

और पहचान के साथ शुरू हुआ —

संदेह।

धीरे-धीरे कुछ यूट्यूबर और क्रिएटर

उसका नाम लेकर वीडियो बनाने लगे।

“सच क्या है?”

“क्या यह सब स्क्रिप्टेड है?”

“क्या 1600 भेड़ें एक आदमी संभाल सकता है?”

रमेश अब अकेले लगभग 1600 भेड़ें चराता था।

यह काम आसान नहीं था।

सुबह सूरज उगने से पहले निकलना।

दिन भर निगरानी।

बीमार भेड़ों पर ध्यान।

बिखरे झुंड को संभालना।

रात में हिसाब।

लेकिन सोशल मीडिया पर बैठे लोग

सिर्फ वीडियो देखते थे —

संघर्ष नहीं।

एक दिन किसी ने वीडियो बनाया —

“यह आदमी झूठ बोलता है।

इतनी भेड़ें एक इंसान नहीं संभाल सकता।"

दूसरे ने कहा —

"यह सब नाटक है।

पीछे पूरी टीम है।"

तीसरे ने आरोप लगाया —

"गरीबी बेचकर पैसे कमा रहा है।"

कुछ लोग अपने चैनल की ग्रोथ के लिए

रमेश का नाम इस्तेमाल करने लगे।

"आज हम बताएँगे रेगिस्तान वाले रमेश की सच्चाई!"

व्यूज़ बढ़ते गए।

बहस बढ़ती गई।

रमेश पहली बार सचमुच परेशान हुआ।

ट्रोल तो वह झेल चुका था।

लेकिन यह अलग था।

अब लोग उसे झूठा साबित करने की कोशिश कर रहे थे।

कई क्रिएटर आपस में लाइव आकर

उसके बारे में चर्चा करने लगे।

"मुझे पक्का लगता है यह फेक है।"

"इतनी गर्मी में कोई ऐसे हँस नहीं सकता।"

"कैमरा कौन पकड़ता है?"

कुछ बातें बढ़ा-चढ़ाकर कही गईं।

कुछ मनगढ़ंत कहानियाँ बनाई गईं।

और धीरे-धीरे अफवाहें फैलने लगीं।

मोबाइल लगातार बजने लगा।

कुछ लोग इंटरव्यू के नाम पर कॉल करते।

कुछ बहस के लिए उकसाते।

कुछ कहते —

"भाई, लाइव आओ और सबको जवाब दो।"

रमेश उलझन में पड़ गया।

क्या वह हर किसी को सफाई देता फिरे?

क्या वह हर आरोप का जवाब दे?

उसका मन भारी रहने लगा।

उस दिन भी वह 1600 भेड़ों के साथ रेगिस्तान में था।

हवा गर्म थी।

रेत उड़ रही थी।

धूप सिर पर थी।

लेकिन उसके भीतर की गर्मी

48 डिग्री से भी ज्यादा थी।

भेड़ों को संभालते हुए उसका ध्यान भटक जाता।

एक भेड़ अलग दिशा में भागी।

वह तुरंत दौड़ा।

दौड़ते हुए उसे लगा —

“मैं यहाँ जान लगाकर काम कर रहा हूँ…

और लोग मुझे झूठा कह रहे हैं।”

उसकी साँस तेज़ हो गई।

शाम को उसने मोबाइल खोला।

फिर एक नया वीडियो।

फिर एक नया आरोप।

किसी ने उसकी पुरानी क्लिप काटकर

अलग अर्थ में पेश कर दी।

किसी ने कहा —

“देखो, यह मुस्कुरा रहा है।

इतना संघर्ष करने वाला ऐसे नहीं मुस्कुराता।”

रमेश देर तक स्क्रीन देखता रहा।

क्या दुख का भी कोई तय चेहरा होता है?

कुछ क्रिएटर सीधे उसे कॉल करने लगे।

“भाई, हम आपको एक्सपोज़ नहीं करना चाहते…

लेकिन सच बताओ।”

कुछ कहते —

“हमारे साथ लाइव आ जाओ,

तुम्हारा सच सामने आ जाएगा।”

कुछ का मकसद साफ था —

उनके चैनल को व्यू चाहिए थे।

रमेश का नाम उनके लिए एक ट्रेंड था।

उस रात वह तंबू के बाहर बैठा रहा।

आसमान शांत था।

लेकिन उसका मन नहीं।

उसे लगा —

“क्या सच में मैंने कुछ गलत किया है?”

संदेह सबसे खतरनाक दुश्मन होता है।

जब वह भीतर घुसता है,

तो इंसान खुद पर ही शक करने लगता है।

अगले दिन उसने फैसला किया।

वह हर आरोप का जवाब वीडियो से नहीं देगा।

वह हर बहस में नहीं कूदेगा।

उसने एक शांत वीडियो रिकॉर्ड किया।

“दोस्तों,

मैं हर सवाल का जवाब देने नहीं आया हूँ।

मैं अपना काम दिखाने आया हूँ।

अगर आपको लगता है कि 1600 भेड़ें एक आदमी नहीं संभाल सकता,

तो आप रेगिस्तान में आकर देख सकते हैं।

मैं यहीं हूँ।"

बस इतना ही।

न गुस्सा।

न तंज।

न चुनौती।

सिर्फ सच्चाई।

वीडियो अपलोड हुआ।

कुछ लोगों ने फिर मजाक उड़ाया।

लेकिन बहुत से लोग उसके साथ खड़े हो गए।

"हमने शुरू से देखा है इसे।"

"यह झूठ नहीं बोल रहा।"

"हर मेहनती आदमी को बदनाम किया जाता है।"

धीरे-धीरे माहौल बदलने लगा।

जो लोग सिर्फ शोर कर रहे थे,

उनकी आवाज़ कुछ कम होने लगी।

रमेश ने समझ लिया —

जब तक आप छोटे हो,

कोई ध्यान नहीं देता।

जब आप बढ़ते हो,

लोग सवाल करते हैं।

और जब आप टिके रहते हो,

तो वही लोग चुप हो जाते हैं।

लेकिन यह दौर आसान नहीं था।

कई रात वह सो नहीं पाया।

कई बार उसने सोचा —

"क्या सोशल मीडिया छोड़ दूँ?"

फिर उसे माँ की आवाज़ याद आई।

पिता की सीख याद आई।

भगवंत की हँसी याद आई।

और उसे याद आया —

उसने यह रास्ता डर से भागने के लिए नहीं चुना था।

एक दिन कपिल मालिक ने कहा —

"रेगिस्तान में तूफान आता है।

कुछ देर रेत उड़ती है।

फिर सब शांत हो जाता है।

लेकिन जो पेड़ जड़ से मजबूत हो,

वह गिरता नहीं।"

रमेश ने उस दिन तय किया —

वह जड़ मजबूत करेगा।

शोर से नहीं हिलेगा।

अब वह पहले से ज्यादा अनुशासन में रहने लगा।

वीडियो कम, लेकिन सटीक।

शब्द कम, लेकिन साफ।

दिखावा शून्य।

1600 भेड़ें अब भी उसकी जिम्मेदारी थीं।

रेगिस्तान अब भी उसका कार्यक्षेत्र था।

और सोशल मीडिया —

अब सिर्फ मंच था, मंज़िल नहीं।

धीरे-धीरे समय बदला।

जो क्रिएटर उसे बदनाम कर रहे थे,

उन्हें नया विषय मिल गया।

शोर कहीं और चला गया।

लेकिन इस दौर ने रमेश को बदल दिया था।

अब वह सिर्फ मेहनती नहीं था।

वह मानसिक रूप से भी मजबूत हो चुका था।

उसने समझ लिया —

नाम कमाने से बड़ी चीज है

नाम बचाना।

और नाम बचाने से भी बड़ी चीज है

स्वाभिमान बचाना।

एक शाम वह फिर उसी टीले पर खड़ा था।

सूरज ढल रहा था।

रेत शांत थी।

भेड़ें धीरे-धीरे बैठ रही थीं।

उसने मन ही मन कहा —

"अगर लोग मेरे खिलाफ बोल रहे हैं,

तो इसका मतलब है कि मेरी आवाज़ उन तक पहुँच रही है।"

अब उसे बदनामी से डर नहीं लगता था।

क्योंकि वह जान चुका था —

झूठ शोर मचाता है।

सच चलता रहता है।

और रेगिस्तान का रमेश —

चलना नहीं छोड़ेगा।

# अध्याय - 12
# वापसी की पुकार

कभी-कभी इंसान दूर जाकर ही समझ पाता है

कि उसकी जड़ें कहाँ हैं।

रमेश बदल चुका था —

लेकिन भागा नहीं था।

अब वह पहले जैसा अनजान लड़का नहीं रहा।

करीब 1600 भेड़ों की जिम्मेदारी वह अकेले संभालता था।

सुबह से शाम तक फैला झुंड,

तेज धूप,

और 48 डिग्री की गर्मी —

अब उसे डराती नहीं थी।

सबसे बड़ा बदलाव यह था कि

कपिल मालिक को अब उस पर पूरा भरोसा था।

पहले हर काम की जाँच होती थी।

अब सिर्फ एक नज़र काफी होती थी।

कई बार दूसरे मजदूरों से कपिल कहते —

“रमेश है तो काम सुरक्षित है।”

यह भरोसा कमाई से बड़ा था।

यह सम्मान था।

लेकिन भीतर कहीं एक खाली जगह अब भी थी।

रेगिस्तान की रातें लंबी होती थीं।

जब हवा हल्की ठंडी हो जाती

और तंबू के बाहर सन्नाटा छा जाता,

तब उसका मन गाँव की तरफ चला जाता।

माँ की आवाज़।

घर का आँगन।

मिट्टी की खुशबू।

एक शाम माँ का फोन आया।

“बेटा… बहुत दिन हो गए।

कब आएगा?”

सवाल सीधा था,

लेकिन दिल पर लगा।

उसने पहली बार महसूस किया —

वह कमाने तो आ गया था,

लेकिन घर से दूर होने की कीमत भी दे रहा था।

अगले दिन उसने हिम्मत करके कपिल मालिक से बात की।

"अगर मैं दो महीने के लिए घर जाना चाहूँ…

तो?"

कपिल ने बिना देर किए कहा —

"जाना चाहिए।

जो अपने घर से जुड़ा रहता है,

वही यहाँ टिकता भी है।"

कुछ पल रुककर उन्होंने और कहा —

"तुम पर मुझे भरोसा है।

तुम वापस आओगे।"

यह वाक्य साधारण था,

लेकिन उसमें विश्वास था।

रमेश ने छुट्टी तय कर ली —

सिर्फ दो महीने।

भागने के लिए नहीं।

सांस लेने के लिए।

गाँव पहुँचा तो माहौल अलग था।

लोग उसे पहचानने लगे थे।

कुछ सम्मान से मिले।

कुछ हैरानी से।

कुछ ने अब भी ताने मारे —

“सोशल मीडिया वाला आ गया!”

लेकिन इस बार वह चुप नहीं टूटा।

वह मुस्कुराया।

क्योंकि अब वह खुद को जानता था।

दो महीने में उसने सिर्फ आराम नहीं किया।

युवाओं से बात की।

छोटे काम की इज़्ज़त पर चर्चा की।

मेहनत को शर्म नहीं, शक्ति बताया।

उसने महसूस किया —

गाँव को पैसों से ज्यादा सोच की जरूरत है।

लेकिन उसने एक बात साफ रखी —

“मैं यहाँ रहने नहीं आया हूँ।

मैं सीखने और जोड़ने आया हूँ।”

दो महीने पलक झपकते गुजर गए।

वापस जाने का दिन आया तो

माँ की आँखें नम थीं।

“फिर आएगा न?”

रमेश ने मुस्कुराकर कहा —

“इस बार मजबूरी में गया था…

अब मकसद से जाऊँगा।”

रेगिस्तान अब सिर्फ कमाई की जगह नहीं था।

वह उसकी तैयारी थी।

कपिल मालिक ने जब उसे लौटते देखा,

तो बस इतना कहा —

“मुझे पता था।”

भरोसा दोनों तरफ मजबूत हो चुका था।

अब रमेश के भीतर नया संतुलन था —

जड़ें गाँव में,

संघर्ष रेगिस्तान में,

और पहचान अपने कर्म में।

लेकिन कहानी अभी रुकी नहीं थी।

क्योंकि अब सवाल यह था —

क्या वह दो दुनियाओं को साथ लेकर चल पाएगा?

# अध्याय - 13

# जुबान की कीमत

दुसरी सफर - रेगिस्तान से लौटे उसे अभी बारह दिन ही हुए थे।

गाँव की सुबहें अलग थीं।

मुर्गे की आवाज़,

आँगन में झाड़ू की सरसराहट,

और मिट्टी की खुशबू।

रमेश को लगा था —

इस बार वह पूरे दो महीने चैन से रहेगा।

पर ज़िंदगी अक्सर योजना से नहीं चलती।

दसवें दिन शाम को फोन बजा।

स्क्रीन पर नाम था —

कपिल मालिक।

रमेश ने तुरंत कॉल उठाया।

“कैसे हो?”

उधर से सीधी आवाज़ आई।

“ठीक हूँ मालिक।”

कुछ पल की चुप्पी के बाद कपिल बोले —

“काम की स्थिति थोड़ी बदल गई है।

तुम्हारी जरूरत है।

कब तक आ सकते हो?”

सवाल साधारण था,

लेकिन अर्थ गहरा।

रमेश जानता था —

उस पर भरोसा किया गया है।

उसने बिना झिझक कहा —

“मैं आ रहा हूँ।”

कपिल ने सिर्फ इतना कहा —

“मुझे पता था।”

फोन कट गया।

उस रात वह देर तक जागता रहा।

माँ की आँखें,

घर का सुकून,

और दिया हुआ वचन —

तीनों सामने खड़े थे।

लेकिन उसके लिए एक बात साफ थी —

जुबान से बड़ा कुछ नहीं।

अगले दिन उसने तैयारी शुरू कर दी।

टिकट बुक हुई —

कुशीनगर से लखनऊ,

और वहाँ से सऊदी की उड़ान।

घर में सबने कहा —

“इतनी जल्दी क्यों?”

“दो महीने की छुट्टी थी।”

रमेश बस मुस्कुराया।

“जुबान दे दी है।”

माँ ने हाथ पकड़कर पूछा —

"इतना जरूरी है?"

उसने धीरे से कहा —

"भरोसा कमाना मुश्किल होता है…

तोड़ना आसान।"

सुबह वह कुशीनगर से लखनऊ के लिए निकला।

रास्ता लंबा था।

बस खेतों के बीच से गुजर रही थी।

आसमान साफ था।

सब कुछ सामान्य लग रहा था।

लेकिन लखनऊ पहुँचने से कुछ किलोमीटर पहले

अचानक जोरदार झटका लगा।

ब्रेक की तीखी आवाज़।

लोगों की चीख।

और धूल का गुबार।

एक पल में सब बदल गया।

रमेश जमीन पर गिरा हुआ था।

हाथ में तेज दर्द उठ रहा था।

जब उसे उठाया गया,

तो उसकी दाहिनी कलाई सूज चुकी थी।

अस्पताल ले जाया गया।

जाँच हुई।

डॉक्टर ने साफ कहा —

"कलाई में फ्रैक्चर है।

कम से कम छह हफ्ते आराम जरूरी है।"

प्लास्टर चढ़ा दिया गया।

माँ को खबर दी गई।

घर से आवाज़ आई —

"वहीं रुको।

वापस आ जाओ।"

कोई और होता —

तो सीधे घर लौट आता।

आराम करता।

हालात को कारण बना देता।

लेकिन रमेश के लिए यह सिर्फ चोट नहीं थी।

यह उसकी प्रतिबद्धता की परीक्षा थी।

अस्पताल के बेड पर लेटे-लेटे

उसने फोन उठाया।

कपिल मालिक को कॉल लगाया।

"मालिक… रास्ते में दुर्घटना हो गई।

हाथ में प्लास्टर है।"

उधर कुछ क्षण सन्नाटा रहा।

"तो मत आओ।

ठीक होकर आना।"

यह सुनकर भी रमेश का निर्णय नहीं बदला।

"मैंने कहा था कि आ रहा हूँ।

मैं आऊँगा।"

फोन के उस पार चुप्पी थी।

फिर धीमी आवाज़ आई —

“संभलकर आना।”

डॉक्टर ने मना किया।

पर उसने डिस्चार्ज लिया।

घर नहीं गया।

सीधे एयरपोर्ट की ओर बढ़ा।

पहला टिकट छूट चुका था।

दूसरा टिकट तुरंत लिया।

एक हाथ में बैग,

दूसरे में प्लास्टर।

एयरपोर्ट की भीड़ उसे देख रही थी।

कुछ लोग फुसफुसाए —

“इस हालत में जा रहा है?”

वह शांत था।

उसे दर्द हो रहा था।

लेकिन भीतर एक अजीब ताकत थी।

वह जानता था —

आज वह सिर्फ सऊदी नहीं जा रहा।

आज वह अपनी पहचान बचाने जा रहा है।

फ्लाइट में बैठते समय

उसने खिड़की से बाहर देखा।

गाँव पीछे छूट रहा था।

पर इस बार वह मजबूरी में नहीं,

मजबूती में जा रहा था।

सऊदी पहुँचते ही

कपिल मालिक खुद लेने आए।

उन्होंने प्लास्टर देखा।

कुछ पल तक कुछ बोले नहीं।

फिर धीरे से कहा —

"आज समझ आया

मैं तुम पर भरोसा क्यों करता हूँ।"

रमेश ने सिर झुका दिया।

उस दिन से उसका दर्जा बदल गया।

वह सिर्फ मजदूर नहीं रहा।

वह भरोसे का नाम बन गया।

दर्द था।

काम सीमित था।

लेकिन सम्मान कई गुना बढ़ चुका था।

लोग कहते थे —

“हाथ टूटा था… फिर भी आया।”

रमेश जानता था —

हाथ की हड्डी जुड़ जाएगी।

लेकिन अगर भरोसा टूट जाता,

तो वह शायद कभी नहीं जुड़ता।

उसने उस दिन एक बात जीवन भर के लिए सीख ली —

इंसान की असली ताकत उसकी जुबान होती है।

और जो अपनी जुबान निभाता है,

वह हालात से नहीं हारता।

# अध्याय - 14

# गुजरता साल

चौदह साल गुजर चुके हैं।

समय कभी शोर नहीं करता।

वह बस बदल देता है।

गाँव की वह पगडंडी अब पक्की सड़क बन चुकी है।

जहाँ कभी धूल उड़ती थी,

आज वहाँ मोटरसाइकिलें दौड़ती हैं।

और रमेश का घर...

अब वह झोपड़ी नहीं रहा।

टीन की चरमराती छत की जगह

मजबूत पक्की छत है।

दीवारों पर हल्का क्रीम रंग।

दरवाज़े पर लोहे का गेट।

अंदर फर्श पर टाइल्स।

छत पर पानी की टंकी।

कभी जो लोग उसे छोटा समझते थे,

आज उसी घर के सामने रुककर देखते हैं।

समय ने बहुत कुछ बदल दिया है।

लेकिन सब कुछ नहीं।

रमेश आज भी सऊदी में है।

उसी रेगिस्तान में।

उसी रेत के समंदर के बीच।

अब वह अकेला नहीं दिखता,

लेकिन भीतर का खालीपन…

वह अब भी उसके साथ चलता है।

अब उसके पास 1600 से भी ज्यादा भेड़ें हैं।

काम में अनुभव है।

अरबी भाषा उसकी ज़ुबान पर सहज है।

ब्लॉग वीडियो पर लाखों लोग जुड़ चुके हैं।

लेकिन रात…

रात अभी भी लंबी होती है।

एक रात वह तंबू के बाहर बैठा था।

हवा हल्की थी।

आसमान साफ।

तारों की भीड़।

उसने फोन खोला।

गैलरी में एक पुरानी तस्वीर थी।

उसकी माँ की।

साड़ी का पल्लू सिर पर।

आँखों में सादगी।

चेहरे पर थकान, लेकिन गर्व।

चौदह साल में उसने बहुत कुछ पाया।

लेकिन एक साल ऐसा भी आया

जब वह सब कुछ होते हुए भी

खाली हो गया।

वह दिन…

जब खबर आई।

"अम्मा नहीं रहीं।"

वह उस समय भी रेगिस्तान में था।

हाथ में फोन काँप रहा था।

आवाज़ सुनाई दे रही थी,

पर दिमाग मान नहीं रहा था।

वह उड़ान से पहुँचा।

लेकिन माँ की आवाज़…

वह पीछे छूट चुकी थी।

आज उसका घर पक्का है।

छत मजबूत है।

रंग-रोगन चमकता है।

लेकिन उस घर के आँगन में

अब वह आवाज़ नहीं गूँजती —

"बेटा खाना खा ले…"

उसने माँ के लिए अलग रसोई बनवाई थी।

स्टील की अलमारी।

गैस चूल्हा।

नई चारपाई।

माँ ने बस कुछ साल ही देखा।

फिर चली गईं।

रेगिस्तान में बैठा रमेश कभी-कभी सोचता है —

“क्या मैं जल्दी लौट सकता था?”

“क्या दो महीने और साथ रह सकता था?”

“क्या कमाई थोड़ी कम भी होती तो फर्क पड़ता?”

सवाल आते हैं।

जवाब नहीं।

वह जानता है —

उसने सब कुछ उनके लिए किया।

घर बनाया।

कर्ज चुकाया।

सम्मान कमाया।

लेकिन माँ को उसकी सफलता नहीं चाहिए थी।

उन्हें उसका साथ चाहिए था।

आज भी वह भेड़ें चराता है।

रेत पर चलते हुए उसके कदम स्थिर हैं।

दोपहर की धूप अब भी 48 तक पहुँचती है।

पसीना बहता है।

लेकिन अब वह कमजोर नहीं पड़ता।

काम के बाद

वह कैमरा निकालता है।

ब्लॉग शुरू करता है।

“दोस्तों,

आज का दिन थोड़ा भारी है…”

उसकी आवाज़ स्थिर रहती है।

लेकिन आँखों की नमी छिप नहीं पाती।

लोग कमेंट करते हैं —

“भाई, आप प्रेरणा हो।”

“आपने जिंदगी बदल दी।”

रमेश मुस्कुराता है।

वह जानता है —

हर मजबूत इंसान के अंदर

एक अधूरा कोना होता है।

गाँव का पक्का घर अब बड़े लोगों जैसा दिखता है।

पेंटिंग, डेंटिंग, चमक।

लेकिन उस घर की छत पर

जब शाम को हवा चलती है,

तो दीवारों के बीच

एक खामोशी भी घूमती है।

रमेश जब भी छुट्टी पर जाता है,

सबसे पहले माँ की तस्वीर के सामने बैठता है।

कुछ नहीं बोलता।

बस देखता है।

जैसे अब भी अनुमति ले रहा हो —

“मैं फिर जा रहा हूँ…”

चौदह साल पहले

वह मजबूरी में गया था।

आज वह जिम्मेदारी में है।

फर्क यही है।

अब वह भाग नहीं रहा।

अब वह बना रहा है।

भेड़ों के बीच खड़ा रमेश

अब सिर्फ मजदूर नहीं है।

वह कहानी है।

वह सफर है।

वह संघर्ष का चेहरा है।

लेकिन अंदर से

वह अब भी वही बेटा है

जो माँ की गोद में सिर रखकर

सुकून ढूँढता था।

एक शाम

रेगिस्तान में हवा तेज चली।

रेत उड़ने लगी।

वह तंबू के बाहर खड़ा था।

उसने आसमान की तरफ देखा

और धीमे से कहा —

“अम्मा,

घर अब पक्का है…

लेकिन मैं अब भी आपका ही हूँ।”

उसकी आँखें भीग गईं।

रेगिस्तान गवाह था —

कुछ दर्द समय भी नहीं मिटा पाता।

रात गहराती गई।

भेड़ें शांत थीं।

आसमान तारों से भरा था।

उसने कैमरा बंद किया।

फोन साइड रखा।

और चुपचाप रेत पर बैठ गया।

चौदह साल।

एक पक्का घर।

लाखों दर्शक।

सैकड़ों वीडियो।

हजारों कहानियाँ।

लेकिन जिंदगी का सच सरल था —

जिसके लिए सब किया,

वह अब साथ नहीं है।

फिर भी वह टूटा नहीं।

क्योंकि माँ ने उसे रोना नहीं,

खड़ा होना सिखाया था।

वह जानता है —

संघर्ष खत्म नहीं होता।

बस इंसान मजबूत हो जाता है।

रेगिस्तान अब भी वही है।

काम अब भी वही है।

वह अब भी वहीं है।

लेकिन भीतर एक बदलाव है —

अब वह सिर्फ अपने लिए नहीं जीता।

वह उन सब के लिए जीता है

जो सपने लेकर घर से दूर हैं।

रात के आखिरी पहर

वह तंबू के अंदर गया।

प्लास्टिक की छोटी सी मेज़ पर

माँ की फोटो रखी थी।

उसने उसे सीधा किया।

धीरे से कहा —

“आपने मुझे भेजा था…

मैं अब भी वही काम कर रहा हूँ।

बस कोशिश है

कि नाम भी रोशन हो।”

हवा तंबू को हिला रही थी।

जैसे कोई आशीर्वाद दे रहा हो।

चौदह साल बाद

रमेश का घर पक्का हो गया।

नाम बड़ा हो गया।

पहचान बन गई।

लेकिन एक सच्चाई हमेशा रहेगी —

रेगिस्तान ने उसे मजबूत बनाया,

और माँ ने उसे इंसान बनाया।

वह आज भी सऊदी में है।

भेड़ें चराता है।

ब्लॉग बनाता है।

लोगों को हिम्मत देता है।

उसने समझ लिया है —

मंज़िल जगह बदलने से नहीं मिलती,

नज़र बदलने से मिलती है।

वह आज भी सऊदी में है।

लेकिन उसका असर सीमाओं से बाहर है।

अंतिम संदेश

इस पुस्तक में आपने रमेश की यात्रा पढ़ी —

संघर्ष से पहचान तक,

और पहचान से जिम्मेदारी तक।

लेकिन यह जानना जरूरी है कि

रमेश की कहानी किसी फिल्म की तरह समाप्त नहीं हुई।

वह जारी है।

हर नए दिन के साथ।

हर नए संघर्ष के साथ।

हर नए वीडियो के साथ।

क्योंकि असली जीत यह नहीं कि

आप कहाँ रहते हैं।

असली जीत यह है कि

आप कैसे सोचते हैं।

रमेश आज भी भेड़ें चराता है।

आज भी तपती धूप में खड़ा होता है।

लेकिन अब वह अकेला मजदूर नहीं है —

वह एक सोच का प्रतीक है।

यह कहानी खत्म नहीं हुई है।

यह हर दिन लिखी जा रही है।

और शायद…

आपकी कहानी भी अभी लिखी जानी बाकी है।

# (लेखक की ओर से)

जब मैंने “रेगिस्तान का रमेश” लिखना शुरू किया, मेरा उद्देश्य केवल एक कहानी बयान करना नहीं था। मैं चाहता था कि पाठक महसूस करें कि हर संघर्ष, हर मुश्किल, हर अकेला पल—वास्तव में हमें आकार देने वाला अनुभव है। रमेश की यात्रा, उसकी मेहनत, उसकी जिम्मेदारी और उसके भीतर की चिंगारी—यह सब उसी सच्चाई का प्रतिबिंब है जो मैंने अपने जीवन और अपने आस-पास के लोगों की कहानी में देखी है।

यह पुस्तक उन सभी लोगों के लिए है, जो अपने परिवार से दूर हैं, जो रोज़मर्रा की कठिनाइयों में अपने सपनों और कर्तव्यों के बीच जूझ रहे हैं। रमेश सिर्फ भेड़ चराने वाला लड़का नहीं है; वह हर उस इंसान का प्रतीक है, जो परिस्थितियों से हार मानने के बजाय अपनी सोच, अपनी मेहनत और अपने धैर्य से आगे बढ़ता है।

मेरी आशा है कि इस कहानी को पढ़ते समय आप केवल रमेश की यात्रा को नहीं देखेंगे, बल्कि अपने भीतर की उस शक्ति और उस साहस को भी पहचानेंगे, जो कभी-कभी

हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में दब जाता है। यह कहानी यह याद दिलाती है कि असली बदलाव कभी बाहरी मंचों, बड़ी उपलब्धियों या पैसा-पत्र की चमक से नहीं आता; वह हमारी सोच, हमारी दृष्टि और हमारी मेहनत से आता है।

इस पुस्तक को पढ़कर पाठक यह महसूस करेंगे कि हर कठिनाई, हर अकेला पल, और हर संघर्ष—वास्तव में हमें हमारे सर्वोत्तम रूप में खड़ा करने के लिए होता है। यही संदेश मैंने रमेश की कहानी में समेटने की कोशिश की है।

**टी. अंसारी**

# लेखक परिचय

## (T. Ansari)

टी. अंसारी एक प्रेरक लेखक और यथार्थवादी कहानीकार हैं, जिनकी लेखनी सीधे दिल से निकलती है। उनके शब्द सिर्फ मनोरंजन के लिए नहीं, बल्कि सोच बदलने और ज़िंदगी में दिशा दिखाने के लिए लिखे जाते हैं।

उनका मानना है कि हर इंसान के भीतर शक्ति और संघर्ष दोनों मौजूद हैं, बस जरूरत है उन्हें समझने और सही दिशा में लगाने की। टी. अंसारी ने अपने लेखन में हमेशा सच्चाई, मेहनत और इंसानियत को प्राथमिकता दी है।

पहली किताब सेक्स वर्सेस सक्सेस है जो कोई साधारण किताब नहीं है।

यह आपके दिमाग की असली लड़ाई को सामने लाती है।

उनकी कहानियाँ वास्तविक जीवन की घटनाओं से प्रेरित हैं। 'रेगिस्तान का रमेश' भी उन्हीं अनुभवों और गवाहियों से

जन्मी है, जो दुनियाभर के मेहनतकशों और सपने देखने वालों की जिंदगी को छूती हैं।

टी. अंसारी खुद उन लोगों से प्रेरणा लेते हैं, जो अपने परिवार से दूर, कठिन हालात में भी अपने सपनों और जिम्मेदारियों के लिए जद्दोजहद करते हैं। उनकी लेखनी में यही संदेश मिलता है —

हालात चाहे जैसे भी हों, सोच और मेहनत इंसान को कभी छोटा नहीं बनने देती।

किताब पढ़ने वाले पाठक अक्सर महसूस करते हैं कि उनकी कहानी केवल कहानी नहीं, बल्कि खुद के संघर्ष, चुनौतियों और बदलाव की दर्पण है।

टी. अंसारी का उद्देश्य यही है कि हर पाठक अपनी सोच बदलें, खुद को पहचानें और अपने जीवन में असली बदलाव लाएँ।